मालवीय जी

H
923.754
M 299 A
M299A

प्रकाशन विभाग

भारत के अमर चरित्र

मालवीयजी

अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

माघ 1892 ● जनवरी 1971

H

Library IIAS, Shimla
H 923.754 M 299 A
39012

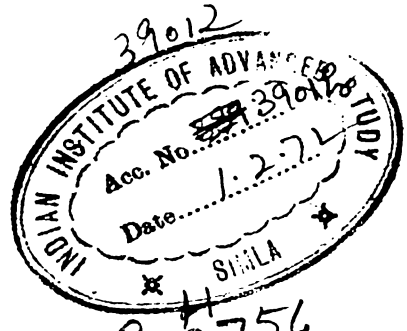

H
923.754
M299 A

मूल्य : 1·25

निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
पटियाला हाउस नई दिल्ली-1 द्वारा प्रकाशित ।

क्षेत्रीय कार्यालय

वोटावाला चैम्बर्स, सर फीरोजशाह मेहता रोड, बम्बई-1
आकाशवाणी भवन, कलकत्ता-1
शास्त्री भवन, 35, हडौस रोड, मद्रास-6

पीताम्बर प्रिंटिंग प्रेस, दिल्ली द्वारा मुद्रित ।

नम्र निवेदन

वक्रतुण्डो महाकायः
सूर्यकोटि समप्रभः ।
निर्विघ्नम् कुरु मे देव
सर्व कार्येषु सर्वदा ॥

महामना मालवीयजी का स्थान भारत के नेताओं में अनुपम है। भारतीय राष्ट्रीय जीवन में वह मलय समीर के समान आए और दीर्घ काल तक भारत राष्ट्र को मन्द-मन्द सेवाओं की हिलोरों से आह्लादित करते रहे।

गंगाजल के भरे पीपे को साथ लेकर लन्दन जाने वाला यह महान भारतीय नख से शिख तक पूर्णतः भारतीय था। ऐसे महान भारतीय की संक्षिप्त जीवनी भी लिखने की क्षमता यह लेखक अपने में नहीं पाता। उसकी यह उक्ति "उद्बाहुरिव वामन :" के ही समान है।

पाश्चात्य सभ्यता के प्रतिरोध और भारतीय संस्कृति की रक्षा के लिए महामना ने जो भगीरथ प्रयत्न किया वह मालवीयजी के जीवन का एक अनुपम भाग है। इस जीवनी में भी इस ओर जितना चाहिए उतना ध्यान नहीं दिया गया, यह लेखक स्वीकार करता है।

सत्ता हस्तान्तरण के इक्कीस साल बाद श्रावण पूर्णिमा के दिन यदि महामना आज जीवित रहते, तो वह क्या कहते और क्या सोचते, यह विचार लेखक के मन में अनेक बार आया, पर वह इस पुस्तक की मर्यादा का विचार कर मालवीयजी के विचारों को यहां नहीं दे रहा है। यह स्मरणीय है कि यह जीवनी किशोरों के लिए लिखी गई है; इसलिए पाठकों को इस अभाव के लिए लेखक को क्षमा करना चाहिए।

इस जीवनी को पूरा करने के लिए जहां लेखक बन्धुवर श्री अशोक जी, उपनिदेशक, प्रकाशक विभाग का आभारी है, वहां वह अपनी छोटी कन्या सरोज लक्ष्मी की कृपा का भी आभारी है। उसके सहयोग के बिना यह जीवनी शायद ही पूर्ण हो पाती। लेखक अपनी कृतज्ञता दोनों के प्रति प्रकट करता है।

लेखक अपने बन्धु और मित्र जयप्रकाश मित्तल का हृदय से आभारी है। इस पुस्तक को तैयार करने में जो सहयोग मिला, तथा पुस्तक की पाण्डुलिपि तैयार करने में जिस मनोयोग, प्रेम और सहृदयता से कार्य किया, वह लेखक कभी नहीं भूलेगा।

अवनीन्द्रकुमार विद्यालंकार

इतिहास सदन

एम 118, कनाट सर्कस नई दिल्ली-1

भारत के अमर चरित्र

प्रकाशन विभाग से उपरोक्त ग्रन्थमाला के अन्तर्गत देश के ऐसे महान पुरुषों और स्त्रियों की संक्षिप्त जीवनियां प्रस्तुत की जा रही हैं, जो अपने महान कार्यों से अमर हो चुके हैं। इस माला में हम देश के अमर पुत्र नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की जीवनी प्रकाशित कर चुके हैं और अब महामना पं० मदनमोहनलाल मालवाय की जीवनी प्रकाशित कर रहे हैं।

पं० मदनमोहन मालवीय का जीवन देश-सेवा और त्याग का जीवन है। इस छोटी सी जीवनी में उनके जीवन की मुख्य-मुख्य घटनाओं का और उनके पुण्य चरित्र का संक्षिप्त वर्णन हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक श्री अवनीन्द्रकुमार विद्यालंकार ने किया है। हमें आशा है कि यह और इस माला की अन्य पुस्तकें बालकों को अपने देश के अमर व्यक्तियों के महान चरित्र का परिचय दे सकेंगी तथा उनके हृदय में भी देश प्रेम और देश सेवा की भावना को जगा सकेंगी।

सूची

1.	प्रारम्भिक जीवन	1
2.	छात्र जीवन	4
3.	शिक्षक, पत्रकार और वकील	8
4.	समाज सेवा और धार्मिक सुधार	14
5.	काशी-हिन्दू विश्वविद्यालय	21
6.	हिन्दी के उन्नायक	28
7.	स्वतन्त्रता संग्राम के सेनानी	30
8.	पारिवारिक जीवन	35
9.	मालवीयजी की मानवता	38
10.	संगीतज्ञ मालवीयजी	44
11.	महाप्रयाण	45

INDIAN INSTITUTE
OF
ADVANCED STUDY
LIBRARY SHIMLA

प्रारम्भिक जीवन

मालवा में गौड़ ब्राह्मणों का एक समुदाय अपने पाण्डित्य, अपनी विद्वत्ता, अपनी धर्म-भक्ति और आचार-विचार के लिए प्रसिद्ध था। इसके लिए वह मालवा से बाहर भी प्रसिद्ध था। इस वर्ग के लोग प्रसिद्ध संगीतज्ञ भी होते थे।

15वीं सदी में यह समुदाय शासक के अत्याचार से बचने के लिए उत्तर में चला आया। पण्डित मदनमोहन मालवीय इसी कुल के थे। इस कुल के कुछ मालवीय परिवार प्रयाग आए और ये भारती-भवन मुहल्ले में आकर बस गए। इनमें ही मालवीयजी के पूर्वज भी थे। मालवीय महाराज के परदादा का नाम श्रीधर था। ये संस्कृत के विद्वान थे। इनके पुत्र पद्मधर भागवत के प्रसिद्ध कथावाचक और संगीतज्ञ थे। पण्डित पद्मधर के चौथे पुत्र पण्डित ब्रजनाथ ही महामना मालवीय के पिता थे। पण्डित ब्रजनाथ भी अपने पिता के समान सुन्दर, गुणी और संस्कृत के विद्वान थे। उनका कण्ठ-स्वर बहुत मधुर था। वे विख्यात कथावाचक थे। पण्डित ब्रजनाथ की पत्नी श्रीमती मूना देवी, मिर्जापुर जिले की थीं। आप बड़ी धर्मपरायणा थीं। नित्य गंगा-स्नान करती थीं और सदा एकादशी का व्रत रखती थीं। स्वभाव की अत्यन्त मधुर और स्नेहशील थीं।

मदनमोहन का जन्म

ऐसे माता-पिता के घर मालवीयजी का जन्म 25 दिसम्बर, 1861 तद्नुसार, विक्रम सं० 1918 पौष कृष्णा 8 बुधवार सायंकाल 6 बजकर 54 मिनट पर हुआ। 25 दिसम्बर ईसा मसीह का भी जन्म-दिन माना जाता है। बालक का इस दिन जन्म लेना ही भाग्योदय का चिन्ह माना गया।

मालवीयजी का घर प्रयाग के अहियापुर मोहल्ले में था। घर के बीच आंगन था। उसके चारों ओर कोठरियां थीं। एक कमरे में राधाकृष्ण की मूर्ति विराजती थी। एक गाय भी थी। इसकी सानी-पानी का काम मालवीयजी की माता करती थीं। घर में कोई नौकर-चाकर नहीं था। मालवीयजी को प्रतिदिन उनकी मां एक सेर दूध और आध पाव मक्खन खाने को देती थीं।

छत से गिर पड़े

मालवीयजी बचपन से ही सुन्दर और चंचल थे। जब वह चार साल के थे, सीढ़ी से छत पर चढ़ गए और वहां से आंगन में गिर पड़े। गिरते ही बेहोश हो गए। देखकर माता मूना देवीजी आर्तनाद कर रो उठीं। पिता ब्रजनाथ राधा-कृष्ण की उपासना में बैठे हुए थे। मां ने पति को लक्ष्य करके कहा—तुम पूजा में बैठे हो और बच्चा यहां बेहोश पड़ा है। पं० ब्रजनाथ शान्ति पूर्वक आचमन करके बाहर आए। बालक के मुंह में एक चम्मच चरणामृत दिया और कहा कोई चिन्ता नहीं। बालक ने धीरे-धीरे आंखें खोल दीं। बस, परिवार का शोक भरा वातावरण प्रसन्नता से भर गया।

गायत्री का जाप

मालवीयजी बचपन से ही धार्मिक थे। सात वर्ष की ही आयु में उन्होंने संगम पर एक समारोह में श्रीमद्भागवत का पाठ किया।

आठ वर्ष की आयु में पिता पं० व्रजनाथ ने पुत्र मदनमोहन को गायत्री मन्त्र की दीक्षा दी, और उनका यज्ञोपवीत संस्कार किया। गायत्री मन्त्र की दीक्षा मिलने पर बालक मदनमोहन ने ब्रह्मचर्य व्रत भी ग्रहण किया। कसरत करने के साथ-साथ मालवीयजी को गायत्री मंन्त्र जपने का शौक लगा। यमुना के किनारे चले जाते और वहां घंटों बैठ कर गायत्री का जाप किया करते थे। मां को भय हुआ कि कहीं बालक सन्यासी न हो जाए। तब मालवीयजी ने मां को आश्वासन दिया—मां, मैं कभी संन्यास न लूंगा।

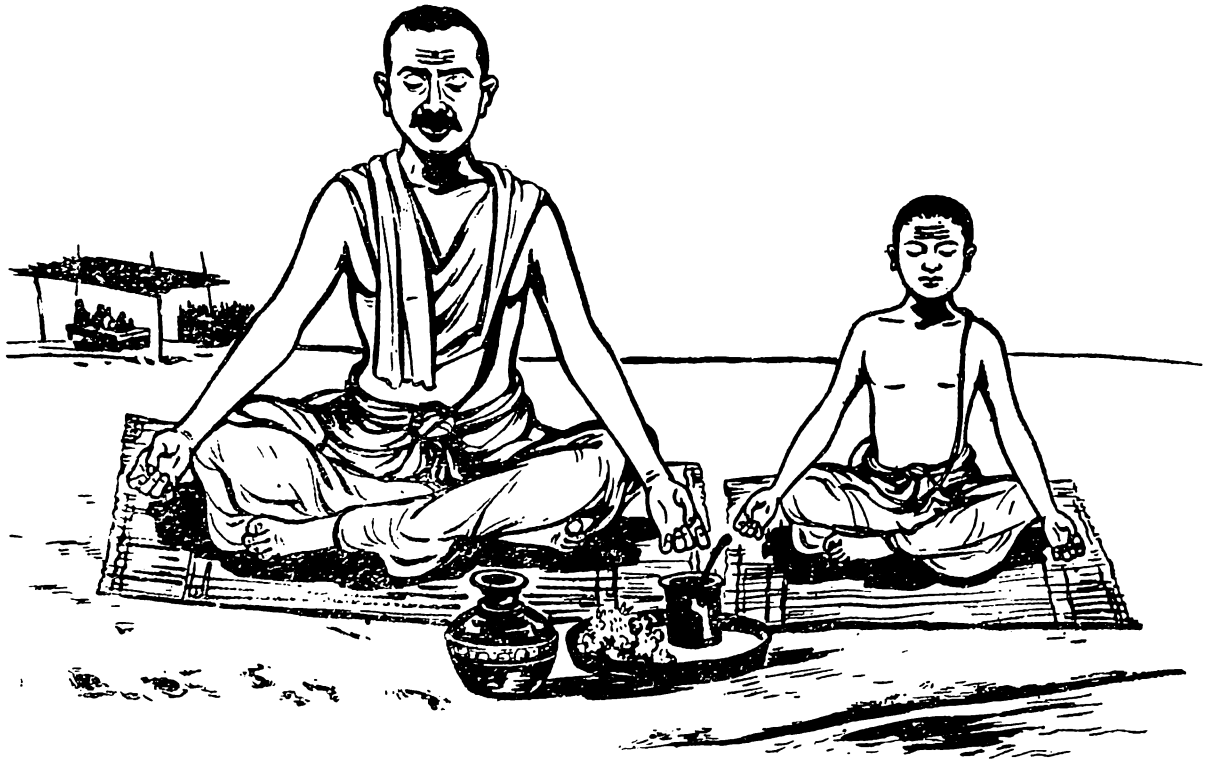

बालक मालवीय अपने पिता के साथ बैठकर संध्योपासना करते हुए

नटखट बालक

मालवीयजी बहुत नटखट बालक थे। खेलकूद में खूब भाग लेते थे। स्कूल से आने पर घर में बस्ता एक ओर फेंक देते, जूते दूसरी ओर उतार देते और खेलने निकल जाते। लड़ने-भिड़ने का उनको खूब शौक था। पार्टियां बनाते और लड़ाई-भिड़ाई करते। कबड्डी खेलते। देशी खेल ही बालक को भाते थे। उन्होंने संगठन करने का अभ्यास इसी समय किया।

ईश्वर पर विश्वास

मालवीयजी को ईश्वर पर अटूट विश्वास था । ईश्वरभक्त होने के साथ-साथ महामना मातृ-पितृ-भक्त भी बहुत अधिक थे । मालवीयजी प्रातःकाल अपनी मां और पिता के चित्रों के अवश्य दर्शन करते और उनको नमस्कार करते । भागवत्, महाभारत और रामायण के एक-एक अध्याय का नित्य पाठ करते । वहां वह माता-पिता के नित्य दर्शन करते और उनकी पूजा करते । मातृ-पितृ भक्ति ने भी मालवीयजी को निर्भय और निडर बना दिया था । कारण था कि उन्होंने जिस काम को उठाया, उसको सफल करके दिखा दिया ।

ईश्वर-निष्ठा, मातृ-पितृ भक्ति, निर्भयता व निडरता एवं आत्मविश्वास के समुच्चय का नाम महामना मालवीय है ।

छात्र-जीवन

मालवीयजी ने बचपन में अपने बाबा और पिता से संस्कृत पढ़ी। उनको नीति के श्लोक, पूजा-पाठ और जप के स्तोत्र कण्ठस्थ हो गए थे। इस समय याद किए गए श्लोक व मन्त्र मालवीयजी को आजन्म याद रहे।

मालवीयजी को कथा सुनने का बड़ा शौक था। वह अपने पिता के साथ जरूर जाते थे और पिता की चौकी के पास बैठकर कथा सुनते थे। पिता ने पुत्र की यह भक्ति देखकर प्रसन्नता भरे हृदय से कहा था—तू बड़ा धार्मिक है। पिता द्वारा की गई प्रशंसा को मालवीयजी कभी नहीं भूले।

मदनमोहन ने गुरु हरदेव की पाठशाला में पढ़ना शुरू किया। गुरुजी अनुशासनप्रिय थे। यहां बालक मदनमोहन ने लघु-सिद्धान्त कौमुदी पढ़ी। यहां बच्चों को कसरत-कुश्ती भी करवाई जाती थी। मदनमोहन को पैतृक विरासत में कसरत-कुश्ती मिली थी। उनके एक भाई जयकृष्ण प्रयाग के एक नामी पहलवान थे। मालवीयजी भी अच्छे अखाड़िये थे। हरदेव गुरु की पाठशाला आज भी चल रही है। इसमें संस्कृत की परीक्षाओं के लिए छात्र तैयार किए जाते हैं।

अंग्रेजी स्कूल में

इलाहाबाद में अंग्रेजी स्कूल 1867 में खुल गया था। मां से कहकर मालवीयजी भी इस स्कूल में भरती हो गए। स्कूल में वह अपने बड़े भाई जयकृष्ण के साथ जाया करते थे। जयकृष्ण मालवीयजी से 6 साल बड़े थे। स्कूल के मास्टर उनको कहते थे कि तुम क्यों अपने साथ अपने इतने छोटे भाई को लाए हो ? परन्तु विद्या व्यसनी बालक मदनमोहन का स्कूल जाना जारी रहा। स्कूल जाने से पहले बालक नित्य प्रति हनुमानजी का दर्शन करने जाता था।

स्कूल में पानी नहीं पीते थे

उन दिनों की परम्परा के अनुसार बालक अपने कुल के आचार-विचार का दृढ़ता से पालन करता था। अत: स्कूल में पानी तक तो पीता नहीं था। एक दिन बालक प्यासा रहा। क्योंकि मौलवीजी ने घर जाकर पानी पीने की छुट्टी नहीं दी थी। प्यासा बालक रोते हुए घर मां के पास पहुंचा और बोला—मां, मैं अब स्कूल में पढ़ने नहीं जाऊंगा। पास ही में उनके एक चाचा खड़े हुए सुन रहे थे। उन्होंने मुंह पर थप्पड़ मारते हुए कहा—स्कूल क्यों नहीं जाओगे ? जाओ वापस। बालक पानी पीये बिना स्कूल लौट गया। दृढ़व्रती बालक प्यासा रहा। इसके बाद स्कूल में ही मालवीयजी के वास्ते मटका और लोटा रखवा दिया गया। इससे पता चलता है कि मालवीयजी बचपन से ही किस तरह अपने विचारों पर अडिग रहा करते थे।

सार्वजनिक कार्यों में भाग लेने के कारण मालवीयजी स्कूल की पढ़ाई पर पूरा ध्यान नहीं दे पाते थे। फलतः पहली बार आगरा में जाकर जब ऐंट्रेंस की परीक्षा दी तब वे फेल हो गए। अगले साल मालवीयजी ने कलकत्ता विश्वविद्यालय की ऐंट्रेंस परीक्षा दी। मालवीयजी ने ऐंट्रेंस की परीक्षा पास कर ली।

कालेज में प्रवेश

मालवीयजी म्योर सेंट्रल कालेज में भरती हुए। स्कूल में जब मालवीयजी दाखिल हुए थे, तब उनके बड़े भाई की तीन आना फीस लगती थी और मालवीयजी की डेढ़ आना। पर कालेज में पढ़ने पर फीस की विकट समस्या सामने आई। माताजी फीस देने के समय अपने कंगन गिरवी रखकर फीस के रुपये ले आईं। जब पं० ब्रजनाथ कथा की आमदनी लाए, तब जाकर माताजी अपने कंगन छुड़ा लाईं! हर मास यही क्रम चलता रहा। पर माता ने फीस की चिन्ता से पुत्र को मुक्त रखा।

कालेज में पढ़ते हुए मालवीयजी के अनेक मित्र बने, जो अन्त तक उनके अंतरंग बने रहे। इनमें पं० मोतीलाल नेहरू, स्वामी श्रद्धानन्द और समाजसेवी वकील सुन्दरलाल के नाम मुख्य हैं। मोतीलाल नेहरू पाश्चात्य सभ्यता के रंग में रंगे हुए थे। किन्तु महामना की उनके साथ दांत काटी दोस्ती थी। दोनों जीवन भर लंगोटिए यार माने जाते रहे।

मालवीयजी को यह बात व्यथा पहुंचाती थी और पीड़ा देती थी कि हिन्दू छात्र अपने धर्म के बारे में कुछ नहीं जानते। दूसरी ओर मुसलमान और ईसाई विद्यार्थी अपने-अपने धर्मों का अच्छा ज्ञान रखते हैं। फलतः हिन्दू विद्यार्थी पाश्चात्य सभ्यता के आक्रमण के आगे नत-मस्तक हो जाते हैं और उस को स्वीकार करते जाते हैं। इसने विद्यार्थी मदनमोहन के मन में संस्कृत के प्रति जहां अनुराग उत्पन्न किया वहां यह विचार भी उत्पन्न किया कि स्कूल-कालेजों में धर्म की शिक्षा देना अनिवार्य होना चाहिए। बचपन में याद कराई गई मनुस्मृति का यह कथन बराबर उनके मन में आता था।

"धर्म एव हतो हन्ति
धर्मो रक्षति रक्षितः।"

स्वप्नदर्शी

हिन्दूविश्वविद्यालय की स्थापना 1916 में हुई, परन्तु उसकी नींव महामना के मन में कालेज में पढ़ते हुए ही पड़ गई थी। अनुभव ने रूप बदल दिया, लेकिन मूलरूप कायम रहा। इन्हीं दिनों मालवीय जी गगा तट पर गायत्री का जाप करते हुए सोचते थे कि प्रयाग से काशी तक फैले हुए गंगा के विस्तृत तट पर एक विशाल विश्वविद्यालय स्थापित किया जाए, जहां विश्व भर के देशों के छात्र पढ़ने के लिए आवें। जहां वेद-वेदान्त और शास्त्रों की शिक्षा दी जाए। उनके सब मित्र इस विचार को 'दिवा-स्वप्न' कहते थे। परन्तु मालवीयजी ने दिवा स्वप्न को सार्थक कर दिखाया।

नाटकों में अभिनय

मालवीयजी के कुछ मित्रों ने आर्य नाटक मण्डली की स्थापना की थी। इसके मालवीयजी भी एक सदस्य थे। इसने कालिदास का 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' नामक नाटक खेलने का निश्चय किया। उन दिनों स्त्री पात्र भी युवक ही होते थे। नाटक खेलना तो तय हो गया, पर यह तय न हो सका कि शकुन्तला किसको बनाया जाए। आकर्षक रूप-लावण्य की मोहक मूर्ति युवा मालवीय को शकुन्तला का पार्ट दिया गया। मालवीयजी अभिनय कला में पूरे प्रवीण निकले। नाटक शुरू हुआ और पर्दा उठने के

साथ जैसे ही मंच पर अनुसूया और प्रियंवदा के साथ शकुन्तला आई, हाल तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठा। राजा दुष्यन्त का, कण्व आश्रम की अध्यक्षा, आश्रम में पिता के अभाव में स्वागत कर रही थी। दर्शकगण वाह-वाह कर उठे। सुरीला संगीतमय स्वर, कोकिल कंठी युवती से भी अधिक मधुर वाणी, संस्कृत के पदों का शुद्ध और स्पष्ट उच्चारण सुनकर और प्रथम दृष्टि में उत्पन्न शकुन्तला का प्रेम और आत्म समर्पण आदि भावों को जिस विश्वास और कुशलता से मालवीयजी ने प्रकट किया, उसको दर्शक यह सोच ही नहीं सके कि यह अभिनय कोई युवती नहीं, एक युवक कर रहा है।

इसी प्रकार शेक्सपियर के लिखे नाटक 'मर्चेण्ट आफ वेनिस' (वेनिस का व्यापारी) के अभिनय में भी मालवीयजी को नारी का पार्ट करने को दिया गया। पार्ट मालवीयजी ने जिस खूबी से किया, उसको देखकर दर्शक दंग रह गए। अंग्रेज प्रोफेसर भी यह कहे बगैर न रह सके कि इंगलैंड की कोई लड़की भी शायद ही इतने प्रभावशाली ढंग से यह पार्ट कर सके।

इन नाटकों ने विद्यार्थी मालवीयजी को कालेज में सर्वप्रिय बना दिया। वह विद्यार्थियों के स्वाभाविक नेता माने जाने लगे।

वाद-विवाद सभाओं में

कालेज की वाद-विवाद सभाओं में मालवीयजी मुख्य रूप से भाग लेते थे। कालेज में प्रवेश करने के कुछ दिनों बाद ही मालवीयजी ने अंग्रेजी में एक वाद-विवाद सभा में भाषण दिया। उस सभा का सभापति अंग्रेजी पढ़ाने वाला शिक्षक था। मालवीयजी की अंग्रेजी की वक्तृता सुनकर वह विस्मित रह गया। उसी दिन स मालवीयजी उस अंग्रेजा के शिक्षक के विशेष कृपा-पात्र शिष्य हो गए।

प्रयाग हिन्दू समाज

म्योर सेंट्रल कालेज के संस्कृत के आचार्य आदित्यराम भट्टाचार्य ने जनता की सेवा, मेलो और हिन्दू समाज को संगठित करने के विचार से प्रयाग हिन्दू समाज की स्थापना की थी। मालवीयजी भट्टाचार्य के प्रिय शिष्य थे और उन्हें अपने गुरु से बहुत श्रद्धा थी। अतएव, मालवीयजी भी इस ओर आकर्षित हुए। जन-सेवा का पाठ मालवायजा न गुरु स साखा। अपने याग्य शिष्य का वह देश-सवा करन का प्रेरणा देते रहे। मालवीयजी क निर्माण म उसक पिता, चाचा और आचार्य भट्टाचार्य का प्रमुख हाथ है।

जन-सेवा के कार्यों में अधिकाधिक समय देने के कारण मालवीयजी पढ़ाई की ओर जितना चाहिए उतना ध्यान दे नहीं सके। अतः आगरा से जब बी० ए० इम्तहान देने गए, तब फेल हो गए। परन्तु इससे मालवीयजी हतोत्साह नहीं हुए। अगले साल उन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय से बी०ए० की डिग्री ली। मालवीयजी 1884 में बी०ए० हुए। कालेज में पढ़ना इसके साथ ही समाप्त हो गया।

कालेज में पढ़ते हुए मालवीयजी को कविता करने का भी शौक उत्पन्न हुआ था। कविता वह 'मकरन्द' नाम से करते थे। परन्तु कविता करने का उद्देश्य भी भारतीय संस्कृति की रक्षा करना और पाश्चात्य संस्कृति के भक्तों का उपहास करना था। वे शृंगार रस की भी कविता करते थे।

एम०ए० में पढ़ने की मालवीयजी के दिल में बहुत लालसा थी। उन्होने एम०ए० में नाम भी लिखा लिया था। तीन मास पढ़े भी। पर, एक दिन पिता ने कहा, बेटा मदनमोहन, पढ़ाई अब आगे नहीं हो सकेगी, और विनम्र पुत्र ने पिता की आज्ञा को शिरोधार्य कर लिया तथा पढ़ना छोड़ दिया।

छात्र-जीवन में वाद-विवाद प्रतियोगिता में भाषण करते हुए मालवीयजी

पढ़ना तो छूट गया, पर 24 साल का युवा खाली तो नहीं रह सकता था ? पैतृक व्यवसाय खुला हुआ था। युवा मालवीय उसको अपनाने के लिए व्यग्र था। वह पिता और बाबा के समान कथा-वाचक और व्यास होने को उत्सुक था। वह सनातन धर्म की ध्वजा उठाने को तैयार था। परन्तु नियति उसको किसी और तरफ ले जा रही थी।

●

शिक्षक, पत्रकार और वकील

मालवीयजी जिस स्कूल में कभी पढ़े थे, उसमें संस्कृत-शिक्षक की जगह खाली थी। स्कूल के हैडमास्टर ने मालवीयजी को सलाह दी कि उस जगह के लिए अर्जी भेज दो। वह स्थान तुमको मिल जाएगा। परन्तु धार्मिक मालवीयजी ने जवाब दिया, कि मैं नौकरी नहीं करूंगा, मैं तो धर्म प्रचार करूंगा। भाई ने यह बात मां से कह दी। अगले दिन जब मालवीयजी पूजा-पाठ से निवृत्त होकर, घर से जाने को तैयार हो रहे थे, तो मां सामने हाजिर हो गईं। मां की आंखें डबडबाई हुई थीं। मालवीयजी ने अपनी ममतामयी मां के रूप में कुल की गरीबी के दर्शन किए और मन-ही-मन दलित भारत माता का साक्षात्कार किया। मालवीयजी ने मां के चरणों में मस्तक रख दिया और नौकरी करने का मां को वचन दे दिया। आज्ञाकारी मातृ-भक्त पुत्र ने अर्जी भेज दी। स्कूल में मालवीयजी संस्कृत के शिक्षक हो गए। मालवीयजी का प्रारम्भिक वेतन 35 रुपये था। दो मास बाद 40 रुपये हो गए। कुछ काल बीतने पर 60 रुपये हो गए।

आदर्श शिक्षक

मालवीयजी से उनके छात्र बहत प्रसन्न रहते थे। वह पाठ में आए श्लोकों को सस्वर गाकर पढ़ाते थे। मालवीयजी का कण्ठ-स्वर छात्रों को आह्लादित करता था। पाठ के मध्य आई कथाएं मालयीय जी विस्तार से सुनाकर पाठ को रोचक और मनोरंजक बना देते थे। उनके पढ़ाने के समय दुर्भाग्यवश ही कोई छात्र गैरहाजिर होता था। मालवीयजी कोमल स्वभाव के मधुर भाषी शिक्षक थे। किन्तु अनुशासन में बहुत कड़े थे। एक बार वह परीक्षा के निरीक्षक बनाए गए। परीक्षा भवन में उन्होंने एक लड़के को नकल करते हुए पकड़ा। वह लड़का स्कल भर में मशहूर था। शिक्षक तक उससे डरते थे। वह स्कूल का दादा था। पर, निर्भीक मालवीयजी ने उसको परीक्षा भवन से निकाल दिया। विद्यार्थी पहले तो अड़ा, लेकिन मालवीयजी को अडिग देखकर धमकी देता हुआ परीक्षा भवन से बाहर हो गया। अन्य लोगों ने मालवीयजी को सावधान किया कि उससे बच कर रहिएगा। परन्तु शिक्षक मालवीयजी निःशंक रहे। मालवीयजी के मधुर स्वभाव और छात्रों के प्रति उनके निश्छल प्रेम का प्रभाव उस छात्र पर भी पड़ा। एक दिन वह मालवीयजी के पैरों पर पड़ गया और क्षमा मांगने लगा। उसने वचन दिया कि वह आगे से अपने को सुधारेगा और कुमार्ग पर न चलेगा। शिक्षक के दण्ड ने एक उत्पाती लड़के के जीवन को सुधार दिया और उसको मनुष्य बनने की प्रेरणा दी। यह था शिक्षक मालवीयजी के चरित्र का प्रभाव।

पत्रकार मालवीयजी

लगभग 26 वर्ष की अवस्था में मालवीयजी की वक्तृता से मुग्ध होकर कालाकांकर के राजा

रामपालसिंह ने उनसे अपने पत्र दैनिक हिन्दुस्तान के सम्पादक का पद ग्रहण करने का अनुरोध किया। उन्होंने शिक्षक का कार्य छोड़ कर राजा साहब का यह काम इस शर्त पर स्वीकार किया कि जब राजा साहब शराब पीए होंगे तब वह मालवीयजी को किसी प्रकार की बातचीत के लिए न बुलावेंगे। यदि बुलावेंगे तो वे नौकरी छोड़ देंगे।

'हिन्दुस्तान' में मालवीयजी की लेखनी का चमत्कार दिखाई दिया। पत्र खूब चला। मालवीय जी का भी यश फैला। हिन्दुस्तान कांग्रेस का पत्र माना जाता था। मालवीयजी कांग्रेस के एक मंजे हुए प्रमुख नेता थे। इस कारण से भी हिन्दुस्तान खूब लोकप्रिय हुआ। हिन्दुस्तान हिन्दी का पहला दैनिक था।

मालवीयजी अपने समय के आदर्श पत्रकार थे। वे एक सुनिश्चित लक्ष्य से पत्र का सम्पादन करते थे। हिन्दुस्तान अंग्रेजी और हिन्दी दोनों में निकलता था। मालवीयजी दोनों के प्रधान सम्पादक थे। उनका इस बात पर सदा ध्यान रहता था कि पत्र में किसी प्रकार की कोई अशुद्धि न रहे। समाचार सत्य हो, विश्वसनीय हो। भाषा जोरदार हो, पर किसी का जी दुखाने वाली न हो। लेखों में जोरदार दृढ़ता हो, पर निन्दा न हो। वे उत्तरदायी पत्रकार थे। मालवीयजी अपने लेख में अन्त तक काट-छांट करते थे। मशीन पर भेजे जाने तक भी संशोधन करते रहते थे। अन्तिम क्षण तक संशोधन करने की आदत मालवीयजी को आजीवन रही।

कालाकांकर से विदाई

जिस बात की आशंका थी वह अप्रिय घटना घट ही गई। ढाई वर्ष तक कोई बात नहीं हुई थी। परन्तु एक दिन राजा साहब ने सायंकाल को मालवीयजी को किसी विषय में परामर्श करने के लिए बुलाया। मालवीयजी जब वहां पहुंचे, तब राजा साहब पीए हुए थे। कमरा शराब की बू से भरा हुआ था। राजा साहब ने ऐसी अवस्था में मालवीयजी को बुला कर शर्त भंग कर दी थी।

इसी समय बातचीत में कांग्रेस की चर्चा छिड़ी और राजा साहब ने श्री अयोध्यानाथ कुंजरू के बारे में कुछ अपशब्द कहे। मालवीयजी के भक्त श्री कुंजरू के लिए कोई अपशब्द कहे, यह उन पर दूसरी चोट थी।

नशा हट जाने पर राजा साहब को अपनी भूल पर पश्चात्ताप हुआ। वह मालवीयजी के पास गए और अपने अपराध के लिए क्षमा मांगी। यही नहीं, अपना मस्तक उनके आगे झुका कर कहा.— आप जो चाहें सजा दें। इससे मालवीयजी का भ्रम मिट गया और राजा साहब द्वारा अयोध्यानाथ कुंजरू के लिए कही बात को उन्होंने कोई महत्व नहीं दिया। किन्तु वचन भंग की बात पर उन्होंने कालाकांकर से विदाई लेने का निश्चय किया।

मालवीयजी को कालाकांकर रोकना असम्भव समझकर राजा रामपालसिंह ने मालवीयजी से कहा, 'अच्छा, भाई जाओ, पर वकालत पढ़ो। वकालत पढ़ने का खर्चा मैं दूंगा।' तब से राजा साहब ने महामना को सौ रुपये जो भेजने शुरू किए, वह हर मास उनको आजीवन भेजते रहे। कालाकांकर छूटा, पर राजा रामपाल सिंह के साथ स्नेह सम्बन्ध नहीं टूटा।

पत्र संचालक

पत्रकार और पत्र संचालक मालवीयजी आजीवन रहे। हिन्दुस्तान छूटने पर महामना 'इण्डियन यूनियन' का सम्पादन करते रहे और अन्य अखबारों में भी लिखते रहे।

1907 में उन्होंने बसन्त पंचमी के अवसर पर साप्ताहिक 'अभ्युदय' निकाला। दो साल स्वयं:

इसके सम्पादक रहे। इम्पीरियल कौंसिल के सदस्य होने पर उन्होंने इसके सम्पादक का पद छोड़ दिया। बाद में मालवीयजी के भतीजे कृष्णकान्त मालवीय इसके सम्पादक हुए और इसने बड़ी ख्याति प्राप्त की। मालवीयजी ने 'सनातन धर्म' नाम से एक साप्ताहिक पत्र भी निकाला। इस साप्ताहिक पत्र की सम्पादक मण्डली में अनेक प्रसिद्ध विद्वान थे। इसके दो वर्ष बाद इलाहाबाद से अंग्रेजी का एक दैनिक पत्र लीडर' उनके प्रयत्नों से निकला। 'लीडर' अपने समय का एक प्रमुख दैनिक पत्र बन गया और इसने राष्ट्रीय आन्दोलन में बहुत योगदान दिया। सी० वाई० चिन्तामणि जैसे प्रतिष्ठित पत्रकार उसके सम्पादक रहे। दिल्ली के प्रसिद्ध 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के संस्थापक भी मालवीयजी थे। सन् 1931 में इसका श्रीगणेश महात्मा गांधी ने किया। मालवीयजी जीवन भर 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के सम्पादक मण्डल के अध्यक्ष रहे। मालवीयजी उसके बोर्ड आफ़ डायरेक्टरस के चेयरमैन भी काफी साल रहे।

वकील मालवीय

मालवीयजी इस समय अपना सारा जीवन धर्म-प्रचार और राजनीतिक जागृति उत्पन्न करने में लगा देना चाहते थे। राजनीतिक क्षेत्र उनको बुला रहा था। उसकी पुकार अनसुनी करना उनको कठिन हो रहा था। मन दुविधा में था। मित्र और हितैषी एवं गुरुजन मालवीयजी को वकालत पढ़ने के लिए बाध्य कर रहे थे। राजा रामपालसिंह, अयोध्यानाथ कुंजरू, ह्यूम प्रभृति का आग्रह था कि महामना कांग्रेस की सेवा करने के लिए वकालत पढ़ें। मालवीयजी के बचपन के सखा सर सुन्दरलाल ने मालवीयजी को कहा, देखो मित्र, यदि राजनीति में सबसे आगे बढ़ जाना चाहते हो, तो वकालत पढ़ो। कानून की बारीकी जाने बिना राजनीति में आगे नही बढ़ा जा सकता। शासकों की भाषा समझने के लिए भी कानून का अध्ययन करना आवश्यक है। इस युक्ति ने महामना को वकालत पढ़ने के लिए उद्यत कर दिया। भारत राष्ट्र का भाग्य निर्माता 28 साल की आयु में बगल में वकालत की पुस्तकें दबा कर ला कालेज का राही हुआ।

मालवीयजी ने वकालत पढ़ी, पर वह यह न तो पैसा कमाने के लिए पढ़ रहे थे और न ही कोई धन्धा करने के उद्देश्य से बल्कि यह देश सेवा भली प्रकार करने के लिए था। साधारणतः वकील, आवेश में बिना विवेक के काम नहीं करता। वह पूर्ण विचार के बाद ही कोई निर्णय करता है और काम उठाता है। अतः मालवीयजी का वकालत पढ़ने का निश्चय दूरदर्शिता और बुद्धिमत्ता का प्रमाण था। इसी कारण वह आंधियों और तूफानों में भी अपनी जगह खड़े रहे।

वकालत की परीक्षा से एक मास पहले ही महामना के एक भाई मनोहर का अफीम खाने से अकस्मात देहान्त हो गया। इस पारिवारिक संकट ने मालवीयजी की योजनाएं धूल में मिला दीं। मालवीयजी ने परीक्षा में न बठने का निश्चय किया। मालवीयजी के राजनीतिक गुरु अयोध्यानाथ कुंजरू को जब मालवीयजी के इस निश्चय का पता लगा तब वह खुद उनके पास गए और उनको सांत्वना देते हुए घंटे भर समझाया कि परीक्षा में अवश्य बैठो। गुरु भक्त विनम्र शिष्य ने बात मान ली। परन्तु, परीक्षा में तब केवल सात दिन शेष रह गए थे। परीक्षा की तैयारी उन सात दिनों में ही करनी थी। मालवीयजी कुशाग्र बुद्धि होने के साथ-साथ अत्यन्त मेधावी भी थे और उनकी स्मरण शक्ति अत्यन्त तीव्र थी। अतः सात दिन भी मालवीयजी जैसे विद्यार्थी के लिए पर्याप्त थे। केवल मन बनाने की बात थी। वह परीक्षा में बैठे और 1891 में वकालत की परीक्षा उन्होंने पास कर ली।

1891 में ही मालवीयजी ने वकालत प्रारम्भ की। पहले मुकदमे में उन्हें नौ रुपया फीस मिली। यह पहली फीस जब उन्होंने अपनी मां के चरणों में रखी, तब मां ने पुलकित हृदय से आशीष दिए, पुत्र का माथा चूमा और छाती से युवा पुत्र को लगा लिया। मातृभक्त पुत्र के लिए यह सबसे अधिक सौभाग्य का समय था। पिता ने भी जान लिया कि गया में श्राद्ध के आचार्य से जिस पुत्र

की याचना की थी, वह यही पुत्र है और उनके कुल में 'न भूतो न भविष्यति' है। अतः वह परम सन्तुष्ट थे।

वकालत में प्रसिद्ध

दो साल बाद ही मालवीयजी हाई कोर्ट में वकालत करने लगे। घर पर ही मुवक्किल उनको घेरना प्रारम्भ कर देते थे। अनेक बार पूजा-पाठ भी मुवक्किलों से फुरसत पाकर बाद में करते थे। अनेक बार अदालती कपड़े अदालत में ही जाकर बदलते थे। ये उनकी गाड़ी में पहले से रखे रहते थे। भोजन के बदले दूध पी लेते और मक्खन का एक गोला निगल लेते। इसी के बल पर सारा दिन काट देते। परन्तु अदालत ठीक समय पर अवश्य पहुंचते।

मालवीयजी ने अपने कालेज के साथियों की तुलना में बहुत देर से वकालत शुरू की थी लेकिन वह शीघ्र ही इलाहाबाद हाई कोर्ट के चोटी के वकीलों में गिने जाने लगे।

मालवीयजी को सफल वकील बनाने में, उनकी वाग्मिता, भाषण शैली, जिरह करने का तरीका और जज को अपना पक्ष समझाने का ढंग, सहायक सिद्ध हुआ। वह अपनी बात को इस ढंग से पेश करते थे और जज स्वतः उसी निष्कर्ष पर पहुंचता, जिस पर मालवीयजी उसको ले जाना चाहते थे। उनकी निगाह निश्चित मानी जाने लगी। अतः मुवक्किलों की भीड़ भी बढ़ने लगी। मालवीयजी छोटे-छोटे वकीलों को अपने पास आए मुकदमे देकर उनकी सहायता करते थे। वह वकील समाज में भी अत्यन्त लोकप्रिय हो गए।

शेरकोट की महारानी के मुकदमे में मालवीयजी की विजय होने से उनका नाम संयुक्त प्रान्त (वतमान उत्तर प्रदेश से बाहर भी फैल गया। इसमें मालवीयजी को दक्षिणा भी खूब मिली। मालवीय जी ने इस रुपये में से तीन-चार हजार रुपया खर्च करके अपना मकान भी पक्का बनवा दिया।

वकालत का त्याग

वकालत का काम दिन-प्रतिदिन बढ़ता जाता था। अतः कांग्रेस के काम को मालवीयजी पहले के समान समय दे नहीं पाते थे। एक दिन अयोध्यानाथ कुंजरू ने मि० ह्यूम साहब से शिकायत की कि मालवीयजी अब कांग्रेस को बहुत कम समय देते हैं। मालवीयजी वहीं बैठे थे। उन्होंने कहा कोई परवाह नहीं। फिर मालवीयजी से बोले—कोई फिक्र न करो, दस साल तक यदि वकालत कर लोगे, तो काफी धन कमाओगे और ख्याति भी प्राप्त करोगे। यह ख्याति तुमको राजनीति क्षेत्र में सबसे आगे पहुंचा देगी। ह्यूम ने अयोध्यानाथ से कहा—मालवीयजी को अपनी वकालत करने दो इधर से इसको खींचो नहीं। फलतः मालवीयजी वकालत की ओर अधिक ध्यान देने लगे। वकालत की गाड़ी तेजी से आगे बढ़ चली। 1909 में मालवीयजी का वकालत से मन उचाट होने लगा। अब मालवीयजी को वकालत करते 16 साल हो चुके थे। अतः वह वकालत छोड़ने का निश्चय कर चुके थे। मुकदमे तो वह 1907 से ही कम संख्या में लेने लगे थे। पिता ने जब सुना तब कहा कि अच्छा है, विश्वविद्यालय का काम करना है तो वकालत छोड़ दो। पिता के इस परामर्श के बाद महामना को वकील बने रहने की प्रेरक शक्ति कोई नहीं मिली। उन्होंने 1911 में 51 साल की आयु में वकालत को त्याग दिया।

पुनः हाई कोर्ट में

वकालत छोड़ने के ठीक दस साल बाद महामना 1922 में पुनः एक दिन इलाहाबाद हाईकोर्ट में उपस्थित हुए। जनवरी 1922 में चौरी-चौरा का थाना जला दिया गया था। बारडोली सत्याग्रह

प्रारम्भ होने वाला था। चौरी-चौरा का अग्निकांड होने के कारण बारडोली, आन्दोलन रुक गया और गांधी जी ने असहयोग आन्दोलन के प्रमुख नेताओं के विरोध की उपेक्षा करना स्वीकार कर लिया। देश में मुर्दानी छा गई। पुलिस ने चौरी-चौरा काण्ड में 157 व्यक्तियों को फांसा था। इनमें से 57 को सेशन कोर्ट ने फांसी की सजा दी थी। इन बिचारों की ओर से हाईकोर्ट में पैरवी करने के लिए

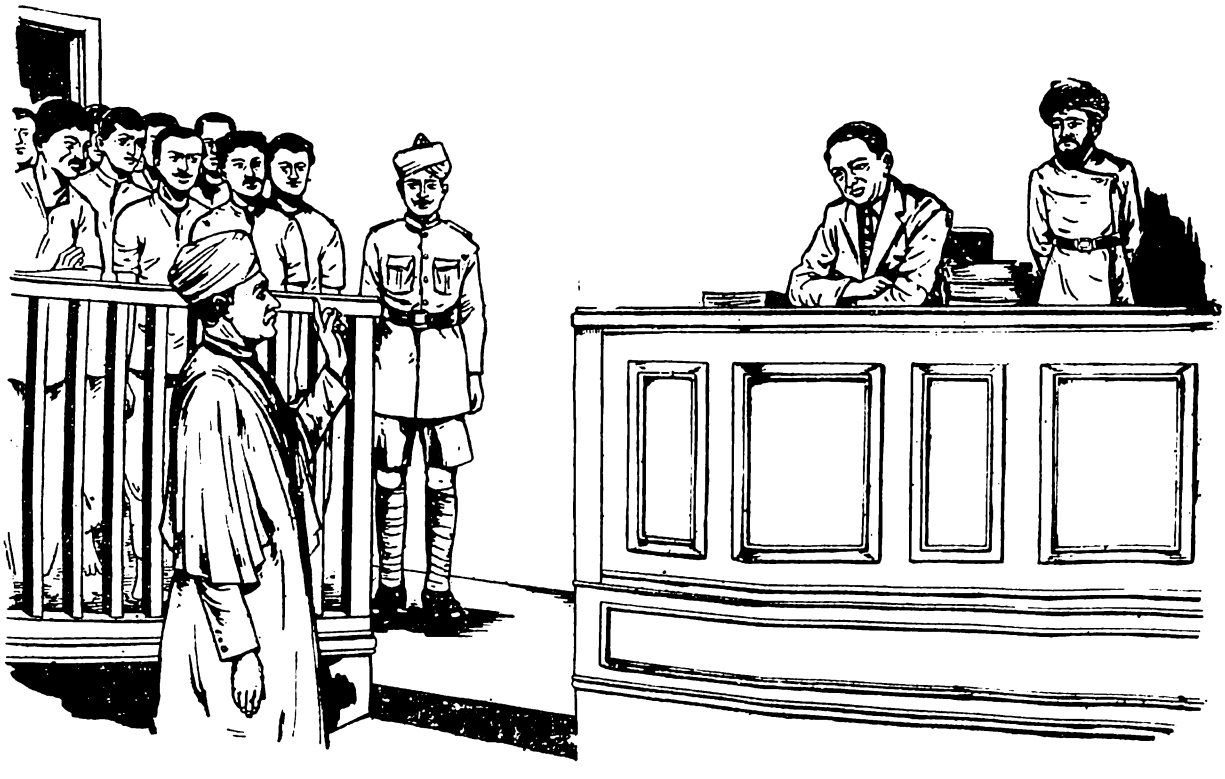

चौरीचौरा मुकदमे में वकील की हैसियत से बहस करते हुए

कोई वकील तयार न होता था। फांसी की सजा पाये अभियुक्तों के परिवार के लोग मालवीयजी के पास पहुंचे और उन्होंने उनकी पैरवी करने के लिए पुनः अदालती पोशाक पहनना स्वीकार कर लिया।

मुकदमे की तारीख के पहले दिन सायंकाल मालवीयजी प्रयाग पहुंचे। मुकदमे का अध्ययन करने का समय महामना को नहीं मिला। अपनी कार में ही बैठे उन्होंने मुकदमे पर एक नजर डाली। एक बार फिर हाईकोर्ट में मालवीयजी की तीव्र बुद्धि, प्रतिभा एवं वाग्मिता की परीक्षा हुई। मालवीयजी ने अभियुक्तों की ओर से तीन घंटे तक डट कर बहस की। अपील की पैरवी को समाप्त करते हुए महामना ने न्यायमूर्ति को लक्ष्य करके कहा, आप न्याय करें पर दया और मानवता का त्याग न करें। न्याय प्रतिहिंसात्मक और प्रतिशोधात्मक न होना चाहिए। न्याय ऐसा हो, जो न्याय की प्रतिष्ठा और गौरव को बढ़ाने वाला हो। जब मालवीयजी का बोलना समाप्त हुआ, तब अंग्रेज जज उठा और उसने 57 अभियुक्तों को निर्दोष घोषित करते एवं मुक्त करते हुए उनसे कहा—आप सब लोगों को महामना मालवीय का कृतज्ञ होना चाहिए। मालवीयजी से बढ़कर कोई दूसरा बकील इस तरह पैरबी नहीं कर सकता था। मालवीयजी सरीखा वकील तुम्हारी पैरवी करने के लिए उद्यत हुआ, यह तुम्हारा परम सौभाग्य है।

गरीबों की पैरवी

एक बार मालवीयजी को एक मौलवी ने अपना वकील बनाया। नजीर देने के लिए उसने कुछ अरबी की पुस्तकें मित्र से मंगवाई थीं। महामना ने अरबी की नजीरों को अपने हाथ से नागरी लिपि में लिख दिया। अदालत में जब यह नजीरें दूसरा पक्ष करने लगा तो वह शुद्ध उच्चारण नहीं कर रहा था। मालवीयजी ने जज से कहा—यह अशुद्ध पढ़ा जा रहा है, यदि आप इजाजत दें तो मैं उनको ठीक-ठीक पढ़ दूं। जज ने मालवीयजी को पढ़ने की अनुमति दे दी। बस, उन्होंने अपना लिखा कागज निकाला और बिना रुके उन अरबी की नजीरों को पढ़कर सुना दिया। नागरी लिपि की इस शक्ति को और क्षमता को देखकर अरबी-लिपि के भक्त की हिम्मत पस्त हो गए। अदालतों से उर्दू लिपि का अन्त करने में यह घटना एक प्रबल कारण हुई। मालवीयजी ने वकालत की, पैसा कमाने के लिए नहीं, धनी और श्रीमन्त होने के लिए नहीं, अपितु देश सेवा के लिए, गरीबों की पैरवी करने के लिए। गरीब जनता का मालवीयजी से बढ़कर दूसरा और कोई वकील नहीं हुआ।

●

समाज सेवा और धार्मिक सुधार

"सेवाधर्मः परमगहनो योगिनामप्यगम्यः।"

योगियों के लिए भी कठिन सेवाव्रत महामना मालवीयजी ने सहज भाव से स्वीकार किया और इस बात को सदा याद रखा कि वह एक स्वयंसेवक है।

यही कारण है कि जब प्रयाग में कुम्भ के मेले के अवसर पर स्वयंसेवकों का कम्प रेती पर लगाया गया, तब महामना भी रेती पर रहे और स्वयंसेवकों के साथ रेत पर ही सोए। यह देखकर कुछ लोग एक चारपाई ले आए। परन्तु मालवीयजी ने चारपाई पर सोना तो दूर रहा, बैठने तक से इन्कार कर दिया। महामना ने प्रेम से कहा—आप लोग क्या भूल जाते हैं कि मैं भी एक स्वयंसेवक हूं। जब सब स्वयंसेवक रेत पर सो रहे हैं, तो उनका अध्यक्ष मालवीय कैसे चारपाई पर सो सकता है? यह थे आदर्श स्वयंसेवक महामना। भारत के स्काउट इनको अपना चीफ स्काउट बनाकर धन्य हो गए।

वकालत करते हुए महामना ने प्रयाग के सार्वजनिक क्षेत्र का कोई भाग नहीं छोड़ा जहां वह न हों। प्रयाग के सामान्य जीवन में मालवीयजी व्याप्त हो गए थे, वह म्युनिसिपैलिटी के भी सदस्य चुने गए। जनता ने उनको निर्विरोध चुना। जनता के इस आग्रह को वह टाल न सके। म्युनिसिपैलिटी में रहते हुए महामना ने नगर की बहुत सेवा की और प्रयाग को सुन्दर एवं स्वच्छ बनाने का प्रयत्न किया।

प्रयाग में प्लेग फैला। यह नई बीमारी थी। लोग घबराए। लोग शहर छोड़ कर भागे। इस भयंकर विपत्ति के समय मालवीयजी ने अद्भुत साहस और विलक्षण धैर्य का परिचय दिया। उनकी संगठन शक्ति और लोक प्रियता भी इस समय प्रकट हुई। शहर छोड़कर जाने वालों के लिए मालवीयजी ने झोंपड़ियां बनाईं। दूसरों के साथ मिलकर फूस ढोया और बांस उठाकर छप्पर बनाए। प्लेग के रोगियों के घर-घर जाकर दवा-दारू की व्यवस्था की। मरे लोगों को उठाकर श्मशान पहुंचाया। लोगों ने मालवीयजी को सावधान किया पर वह निर्भय होकर रोगियों के घर-घर जाकर सेवा करते रहे। लोगों की चेतावनी झूठी नहीं निकली। दिन रात अथक परिश्रम करने के कारण मालवीयजी भी बीमार हो गए। परन्तु थोड़े अर्से के बाद उन्होंने स्वास्थ्य लाभ कर लिया। इस महान् सेवा कार्य ने प्रयाग को मालवीयजी का सदा के लिए कृतज्ञ बना दिया।

सेवा मूर्ति

माघ मेले के अवसर पर यात्रियों की सेवा के लिए मालवीयजी ने प्रयाग सेवा समिति की स्थापना की थी। प्लेग फैलने पर उसकी आवश्यकता बढ़ गई और उसका कार्यक्षेत्र भी बढ़ गया।

इससे प्रयाग सेवा समिति लोकप्रिय संस्था भी हो गई। इस संस्था का मालवीयजी ने विस्तार किया। सेवा समिति की शाखाएं अन्य जगहों और प्रान्तों में भी खोलीं। महामना इसके अध्यक्ष थे और डा०हृदयनाथ कुंजरू प्रेजीडेंट हुए। इसका कार्य प्रयाग तक ही सीमित न रहा हरिद्वार के कुम्भ मेले में भी यह समिति सदा पहुंचती थी। जहां कहीं भी सेवा की जरूरत हो और प्रान्तों से पुकार आए, वहां यह पहुंचती थी। बंगाल का दुर्भिक्ष हो या पंजाब का मार्शल-ला, यह सेवा के लिए सर्वत्र पहुंच जाती थी।

प्रयाग सेवा समिति एक समय 'सेवा' नाम से एक मासिक पत्रिका भी निकालती थी। मालवीयजी द्वारा स्थापित बालचर समिति भारत-भक्ति का प्रचार करती थी। इसके कार्य का प्रारम्भ, इसके सेवकों का प्रदर्शन, श्रीधर पाठक रचित 'भारत गीत' या भारत वन्दना से होता था। भारत गीत सेवा समिति ने संग्रह करके प्रकाशित भी किए थे। इसका एक गीत भारत का राष्ट्रगीत होने की क्षमता रखता है।

गोरक्षा

महामना प्रारम्भ से ही गो-भक्त और गो-रक्षक थे। गो रक्षा पर महामना ने पहला व्याख्यान 16 साल की आयु में मिर्ज़ापुर में दिया था। खेती के लिए बैलों की जरूरत है, खेती की पैदावार घर तक भी पहुंचाने के लिए बैलगाड़ी की जरूरत है। इस आर्थिक पहलू के आधार पर महामना ने गोरक्षा पर पहला भाषण दिया था। गोरक्षा पर भाषण देकर ही महामना ने सन्तोष नहीं किया। जगह-जगह गो-रक्षिणी सभाएं स्थापित कीं, गौशालाएं और पिंजरा पोल खोलने की व्यवस्था की और प्रेरणा दी। गो-रक्षा आन्दोलन को मालवीयजी ने भारतीय स्वाधीनता संग्राम का एक अंग बना दिया था। उधर सनातन धर्म सभा के कार्यक्रम में भी इसको मुख्य स्थान प्राप्त था।

गंगा की धारा

गंगा की धारा अविच्छिन्न रहे और हर की पौड़ी पर, जहां भक्त लोग स्नान करते हैं, जल धारा सीधी आवे, यह मालवीयजी की चिन्ता का विषय सदा रहा। दूधिया बन्द का बिजलीघर और बांध बनने पर यह भय प्रकट किया जा रहा था कि गंगा की शुद्ध जल-धारा हरकी पौड़ी पर न पहुंचेगी। इससे धार्मिक जगत में भारी हलचल मची। सनातन धर्म सभा की ओर से इस आन्दोलन को दरभंगा-नरेश और महामना मालवीयजी ने चरम सीमा पर पहुंचाया। विक्षोभ के ताप को लार्ड हार्डिंग ने अनुभव किया। उसने हरिद्वार में एक सम्मेलन बुलाया। सनातन धर्म सभा की ओर से महाराज दरभंगा और महामना मालवीयजी इसमें सम्मिलित हुए। इस सम्मेलन ने महामना को विश्वास करा दिया कि हिमालय से निकली गंगा की एक शुभ्र जल-धारा अविच्छिन्न रूप से हर की पौड़ी पर पहुंचेगी. और प्रस्तावित बांध के कारण उस पर कोई रोक न लगाई जाएगी। महामना की नीति-कुशलता की यह अद्भुत विजय थी। पर, 1945 में भी, जब मालवीयजी बहुत धीमा बोलते थे, उस समय भी उनका भय दूर नहीं हुआ था। इलाहाबाद में अपने मिलने वालों से यही कहते थे कि ध्यान रखना गंगा की अविच्छिन्न धारा में कोई बाधा न आने पावे। 85 साल की आयु में भी धर्म प्राण तपस्वी ब्राह्मण को गंगा की धारा की चिन्ता थी।

सत्याग्रह

कुम्भ और माघ मेले के अवसरों पर प्रयाग और हरिद्वार में हिन्दू संगठनों की ओर से विशेष प्रबन्ध किया जाता था। अनेक बार सरकारी व्यवस्था धर्मप्राण और भक्त हृदय हिन्दू के मनोभावों पर आघात पहुंचाने वाली होती थी। एक बार प्रयाग के कुम्भ मेले के अवसर पर तीर्थ यात्रियों के

स्नान की जगह बल्लियों से घर दी गई और तीर्थयात्रियों के लिए स्नान करने की सुविधा बहुत कम रह गई। मालवीयजी ने सरकार को लिखा। पर मेले की व्यवस्था में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। इस पर महामना का ब्रह्म-तेज प्रकट हुआ। वह सत्याग्रहियों की एक टोली लेकर उस जगह जा पहुंचे, जहां से आगे जाना मना था। इस दल में श्री जवाहरलाल नेहरू भी थे। यह जत्था खटोले के पास पहुंच कर बैठ गया। आगे पुलिस खड़ी थी। दोपहर हो गई थी, पर सरकार अड़ी हुई थी। यह देख युवा नेहरू उठा और बल्लियों पर चढ़कर गंगा की धारा में कूद पड़ा। इसका अनुसरण बाकी लोगों ने किया। वयोवृद्ध महामना में भी युवावस्था का जोश उत्पन्न हो गया और वह भी बल्लियों पर चढ़कर गंगा जी में उतर गए। पुलिस के डंडे आकाश में घूमते रहे और सत्याग्रही विजयी हुए। अंततः सरकारी व्यवस्था बदली। धर्म भावना का आदर हुआ।

हरिद्वार में मेले के अवसर पर हर की पौड़ी पर एक पुल उस स्थान पर बनाया गया था जहां तीर्थ यात्री और भक्त लोग विशेष रूप से स्नान करते हैं। धर्म भक्त तीर्थयात्रियों को यह खटकता था कि लोग उस स्थान के ऊपर से जूते पहनकर जाएं, जहां वह लोग स्नान करते हैं। मेले के अधिकारियों ने पुल हटाने से इन्कार कर दिया। सत्याग्रह की तैयारी होने लगी। मालवीयजी भी पहुंचे। हरकी पौड़ी पर आसन जमा दिया और कथा करने लगे। लाखों की भीड़ कथा सुनती और यह भी सुनती कि यदि पुल न हटाया गया, तो सत्याग्रह होगा। मालवीयजी ने संयुक्त प्रान्त के गवर्नर को एक बड़ा लम्बा तार दिया और पुल हटवाने की अपील की। गवर्नर के हस्तक्षेप से पुल हटा दिया गया।

धार्मिक सुधार

धार्मिक क्षेत्र में महामना मालवीयजी का स्थान सदा उच्चतम रहा। हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए महामना ने अनेक बार अपने को संकट में डाला। परन्तु आपकी ईश्वर-निष्ठा और आपका आत्म-विश्वास सदा विजयी हुआ।

1886 की कलकत्ता कांग्रेस के समय मालवीयजी का व्याख्यान वाचस्पति दीनदयालु शर्मा से परिचय हुआ। वाचस्पति यद्यपि हरियाणा के थे, किन्तु मथुरा से उर्दू में एक साप्ताहिक निकालते थे। इस परिचय के फलस्वरूप हरिद्वार में कुम्भ के अवसर पर अ० भा० भारत धर्म महामण्डल की स्थापना हुई। महामना मालवीयजी भी इसके एक उपदेशक घोषित किए गए। 25 वर्ष के मालवीय जी जहां एक ओर कांगेस के संगठन मंत्री थे, वहां, दूसरी ओर भारत धर्म महामंडल के उपदेशक भी थे। महामना ही उन दिनों इन दोनों का सामंजस्य और इन दोनों में समन्वय कर सकते थे।

परन्तु भारत धर्म महामंडल के साथ, मालवीयजी की बहुत दिनों तक पटी नहीं। भारत धर्म महामंडल का केन्द्रीय कार्यालय दिल्ली से काशी ले जाया गया। यह नया दल कट्टर सनातनी था और रत्तीभर भी हिन्दू धर्म में सुधार करने की आवश्यकता नहीं मानता था जैसे कि वह मूर्ति-पूजा की नई व्याख्या को नहीं मानता था। वह यह नहीं मानता था कि मन को एकाग्र करने और उसका अभ्यास करने के लिए मूर्ति की पूजा की जाती है। निराकार ईश्वर की सामान्यजन उपासना ध्यान-मग्न होकर नहीं कर सकते हैं। लड़कियों को शिक्षा देने का प्रश्न भी विवाद का कारण था। अतः मालवीयजी इससे अलग हो गए। उनके अनुयायी भी इससे अलग हो गए। भारत धर्म महामंडल कट्टर हिन्दुओं की संस्था हो गई।

सनातन धर्म की स्थापना

भारत धर्म महामंडल से अलग होने के बाद प्रयाग के कुम्भ मेले पर महामना मालवीयजी के प्रयत्न से सनातन धर्म सभा की स्थापना हुई। इसके अध्यक्ष भी महामना मालवीयजी हुए। इसके प्रथम

मंत्री व्याख्यान वाचस्पति दीनदयालु शर्मा हुए। इसकी हरेक प्रान्त में शाखाएं स्थापित हुईं। हर साल इसका वार्षिक अधिवेशन विभिन्न स्थानों पर होता रहा। यह हिन्दू समाज में सुधार के पक्ष में थी।

सनातन धर्म सभा शारीरिक बल बढ़ाने की ओर भी ध्यान देती थी और इस उद्देश्य से महामना मालवीयजी के आशीर्वाद से महावीर दल की स्थापना हुई थी। यह सनातन धर्म सभा की वालंटियर सेना है।

1935 में सनातन धर्म सभा का एक अधिवेशन प्रयाग में महामना मालवीयजी की अध्यक्षता में हुआ। इसमें हिन्दू धर्म के प्रचार के लिए एक व्यापक प्रोग्राम तैयार किया गया। इसमें ग्राम-ग्राम में पाठशाला खोलना, स्कूल खोलना, व्यायाम-शालाएं स्थापित करना, गौ-शालाएं चलाना, अनाथों और विधवाओं की रक्षा करना, शुद्धि का समर्थन अनिवार्य था।

अछूतोद्धार

मालवीयजी ने देखा कि अछूतों को हिन्दूओं से अलग करने की प्रबल कोशिश की जा रही है। यह भारतीय स्वाधीनता का एक प्रश्न हो गया है। मौलाना मुहम्मदअली ने काकीनाड़ा कांग्रेस के अध्यक्षपद से भाषण देते हुए कहा था कि अछूतों को हिन्दू-मुस्लिम परस्पर आधा-आधा बांट लें। अतः अछूत जातियां हिन्दू धर्म में ही रहें, इसके लिए कुछ करना आवश्यक हो गया था। इसके लिए महामना ने उनको रामनाम की दीक्षा देने की योजना बनाई। अछूत भी देव दर्शन कर सकें, इसकी मन्दिरों में व्यवस्था कराई। पंजाब सनातन धर्म सभा का अधिवेशन 1934 में रावलपिंडी में हुआ था। मालवीयजी इसके प्रधान थे। यहां सर्वप्रथम महामना ने कहा कि अछूतों के लिए भी मन्दिरों का और देवदर्शन का द्वार खुल जाना चाहिए।

परन्तु रामनाम की दीक्षा से हरिजन सन्तुष्ट न थे। महामना श्रद्धानन्द दल के भी अध्यक्ष थे। यह भी दलितोद्धार था। यह हरिजनों को समर्थ हिन्दुओं के समान एक धरातल पर लाता था। रामनाम की दीक्षा सवर्ण और असवर्ण में भेद करती थी। मालवीयजी ने इस बात को अनुभव किया और हरिजनों को ओं नाम की दीक्षा देना स्वीकार किया। हरिजनों को ओं का पवित्र मंत्र देने का मालवीयजी के बाल-मित्र और सहयोगी तक विरोधी थे। परन्तु मालवीयजी अपने संकल्प में अडिग रहे और इन मंत्रों से वह अछूतों को दीक्षा देने लगे।

ओं नमः शिवाय

ओं नमो नारायणाय

ओं नमो वासुदेवाय'

ओं परमात्मा का सर्वश्रेष्ठ नाम है। यह तीन अक्षरों अ उ और म से बना है। ओं को परम सिद्धिदायक माना जाता है।

1926 में कलकत्ता कांग्रेस के अवसर पर गगा सागर में मालवीयजी ने चाण्डाल से लेकर ब्राह्मण तक को ओं की दीक्षा दी। यह कट्टर सनातन धर्मियों को स्वीकार न था। भारत धर्म महामण्डल ने इसका डटकर विरोध किया। इस मौके पर कुछ उपद्रव भी हुए। महामना पर कीचड़ उछाला गया। परन्तु महामना अविचल भाव से मंत्र-दीक्षा देने का कार्य बराबर करते रहे।

अम्बेडकर मेरा भाई है

गोल मेज कानफ्रेंस की अल्पसंख्यक समस्या कमेटी की बैठक प्रधान मंत्री रैमजे मैकडानल्ड की अध्यक्षता में हो रही थी। डा० अम्बेडकर ने इसमें मांग की कि अछूतों की पृथक् निर्वाचन प्रणाली स्वीकार की जाए। इसका अर्थ था कि मुसलमान, सिख, एंग्लोइंडियन के समान अछूत भी हिन्दू नहीं

हैं। मालवीयजी ने भावावेश में कह दिया कि डा० अम्बेडकर तो मेरा भाई है। अम्बेडकर ने तुरन्त उठ कर कहा, महामना मालवीयजी ने मुझको अपना भाई कहा है। पानी का भरा गिलास लाए हुए डा० अम्बेडकर ने ब्रिटिश प्रधान मंत्री की सभा में रखकर पूछा, क्या महामना मालवीय मेरे हाथ का दिया पानी पीने को तैयार हैं ? किन्तु जो व्यक्ति अपनी पत्नी का बनाया भोजन नहीं करता उससे डा० अम्बेडकर का दिया पानी पीने की आशा कैसे की जा सकती थी ? महामना को सदियों का चिरन्तन संस्कार यह करने से रोक रहा था। यदि वह डा० अम्बेडकर का दिया पानी पी लेते, तो हिन्दू धर्म में एक क्रान्ति हो जाती।

लन्दन में घटी घटना ने महामना को विश्वास दिला दिया कि अछूतों को हिन्दू समाज में तभी रखा जा सकता है, जब उनको पूर्ण धार्मिक अधिकार दिए जाएं, अतः लन्दन से दिल्ली पहुंचने पर उन्होंने श्रद्धानन्द दल के मेहतर कार्यकर्त्ताओं को बुलाया और कहा कि एक विराट सभा करो, वह अछूतों को गायत्री मंत्र की दीक्षा देंगे। इस मौके पर बना वह हलवा भी प्रसाद मानकर ले लेंगे। इससे कार्य-कर्त्ताओं में नई स्फूर्ति पैदा हुई। दीक्षा समारोह का वह विराट् आयोजन किया गया, इसमें महामना ने सबको गायत्री मन्त्र की दीक्षा दी और प्रसाद में वह हलवा लिया। हिन्दू धर्म में यह एक नूतन क्रांति थी। परन्तु यह क्रांति बढ़ी नहीं।

रैमजे मैकडानल्ड के दिए गए साम्प्रदायिक निर्णय को रद्द करने के लिए गांधीजी ने यरवदा जेल में आमरण अनशन किया। गांधीजी की जान हर कीमत देकर बचानी चाहिए, यह थी मालवीयजी की मान्यता। गांधीजी के प्राण डा० अम्बेडकर की मुट्ठी में थे। कवीन्द्र रवीन्द्र, डा० म्यू और अन्य नेता महामना मालवीयजी के साथ मिलकर डा० अम्बेडकर के दुराग्रह से लड़ रहे थे। आपने डा० अम्बेडकर के हरिजनों के लिए स्थान सुरक्षित रखने पर रैमजे मैकडानल्ड के दिए गए साम्प्रदायिक विभेद को बदलना स्वीकार किया। गांधीजी ने आमरण अनशन समाप्त कर दिया और हरिजन पूर्णतः हिन्दू समाज से अलग होने से रुक गए। मालवीयजी की अध्यक्षता में बम्बई में एक विराट सभा हुई और हरिजन सेवक संघ की स्थापना की गई। इसके अध्यक्ष सेठ घनश्याम दास बिड़ला बनाए गए। यहां तक तो मालवीयजी गांधीजी के साथ थे। परन्तु, कानून द्वारा हरिजनों के लिए मन्दिर खुलवाने के वह समर्थक नहीं थे।

सुधारक

महामना को सामाजिक क्षेत्र में समाज-सुधार का साधारणतः विरोधी माना जाता है। पर बात ऐसी नहीं। मालवीयजी के ही प्रभाव से यह प्रस्ताव सनातन धर्म सभा, ब्राह्मण सभा, आर्य संस्थाओं में स्वीकार किया गया कि ब्राह्मणों में द्रविड़, तैलंग, गौड़, कान्यकुब्ज और सारस्वत और इनकी शाखाएं और प्रशाखाओं के विवाह-शादी होने में कोई दोष नहीं है। मालवीयजी ने स्वतः मालवीय ब्राह्मणों से बाहर अपनी पौत्री का विवाह किया। एक मर्यादा के भीतर मालवीयजी समाज-सुधार के लिए सदा उद्यत रहते थे। हां, शास्त्र व्यवस्था अवश्य चाहिए थी।

हिन्दू जाति के रक्षक

महामना को हिन्दू होने का अभिमान था। जैसे वह भारत को सर्वश्रेष्ठ देश मानते थे और यहां जन्म पाने की आकांक्षा करते थे, जैसे वह हिन्दू धर्म को सर्वधर्मों से श्रेष्ठ मानते थे और हिन्दू जाति को मानव जाति में सर्वश्रेष्ठ मानते थे और इसकी रक्षा करना मानवता की रक्षा करना मानते थे।

वह हिन्दुओं का संगठन करना चाहते थे और कृत्रिम रूप से बनाए गए अल्पसंख्यक वर्गों को सन्तुष्ट करने के लिए और उनको बराबरी देने के लिए बहुसंख्यक समाज के हितों पर कुठाराघात करने

के पक्ष में न थे।

असहयोग आन्दोलन के स्थगित होते ही मालाबार में मोपला लोगों ने विद्रोह किया। मोपलों ने हिन्दुओं पर जो अत्याचार किए, उनको सुनकर सारा भारत कांप उठा। इसके बाद दिल्ली, सहारनपुर, मुल्तान, कोहाट, बंगाल आदि स्थानों पर दंगे हुए। दंगाग्रस्त इलाकों के हिन्दुओं की रक्षा करने के लिए और उनकी सहायता करने के लिए महामना ने लाला लाजपत राय और अपने अंतरंग सखा स्वामी श्रद्धानन्द के सहयोग से 1928 में अखिल भारतीय हिन्दू महासभा की स्थापना की। नव-संगठित हिन्दू महासभा का पहला अधिवेशन काशी में महामना के सभापतित्व में हुआ। इसने शुद्धि और दलितोद्धार का समर्थन किया।

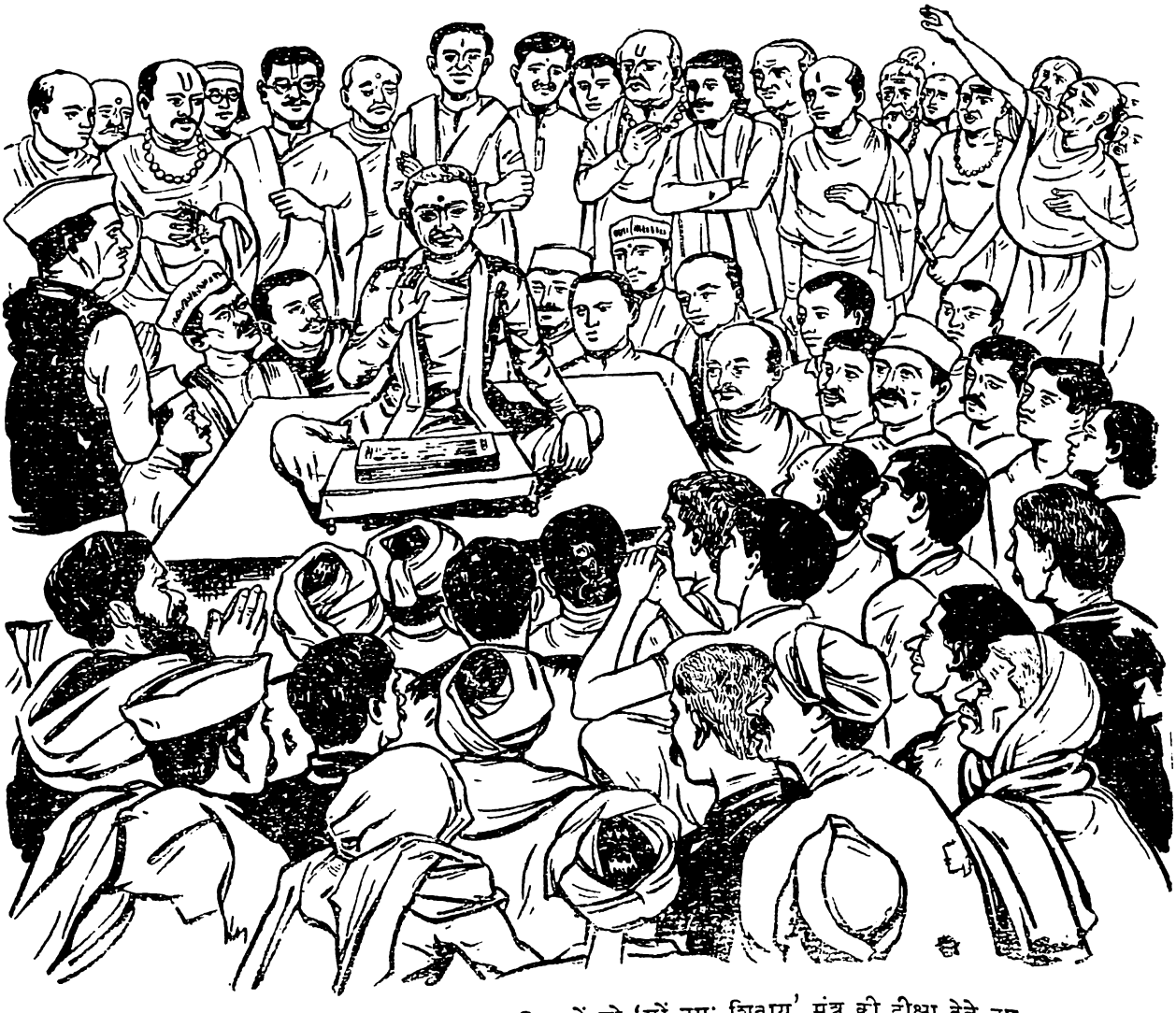

गंगासागर मेले में अछूतों-सहित समस्त हिन्दुओं को 'ओं नमः शिवाय' मंत्र की दीक्षा देते हुए

एक बार महामना ने कहा था :

'मेरी सदा ऐसी इच्छा रही है कि हिन्दू और मुसलमान शक्तिमान हों और जगत के अन्य समाजों के साथ खड़े होने लायक बनें। दोनों समाजों का सम्बन्ध इतना दृढ़ होना चाहिए कि उसे कोई तोड़ न सके।

'मेरा अपने धर्म पर दृढ़ विश्वास है, परन्तु परधर्म का अपमान करने की कल्पना मेरे मन को छू तक नहीं गई है। गिर्जाघर या मस्जिद के पास से मैं जाता हूं, तब मेरा मस्तक अपने आप झुक जाता है। जब परमेश्वर एक ही है, तो लड़ने का कारण क्या? भूमि एक, देश एक, वायु एक, ऐसी परिस्थिति रहते हुए भी आपस में दंगे-फसाद हों, इससे बढ़कर और आश्चर्य की बात क्या हो सकती है? हमारी रक्षा विदेशी सेना करे, यह बड़ी लज्जा की बात है।'

इससे प्रकट होता है कि मालवीय जी का प्राणिमात्र से प्रेम था। किसी के प्रति उनके मन में द्वेष न था। उनकी प्रार्थना थी :

सर्वे भवन्तु सुखिन :, सर्वे सन्तु निरामया :

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भाक् भवेत्।'

महामना मालवीयजी की कल्पना शक्ति जैसी महान् थी, वैसे ही उनका व्यक्तित्व भी महान् था। इसका एक कारण था कि ईश्वर पर उनका अद्‌भुत और विलक्षण विश्वास था।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

महामना मालवीयजी के 86 वर्ष के जीवन का सबसे बड़ा और महत्वपूर्ण कार्य काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना है। यह विश्व-इतिहास की एक अनोखी घटना है कि एक बी०ए० पास युवक ने अपने छात्र जीवन की कल्पना और स्वप्न को पूरा करने में सफल हुआ। छात्र जीवन में वे स्वप्न देखते थे कि प्रयाग से काशी तक गंगा तट पर एक विश्वविद्यालय स्थापित हो, जिसमें विश्व भर के छात्र पढ़ने को आयें और उसमें ऋषि दयानन्द और स्वामी विवेकानन्द सदृश धर्म प्रचारक उत्पन्न हों।

मालवीयजी ने पहले प्रयाग में विश्वविद्यालय स्थापित करने का संकल्प किया था। इसकी नियमावली और इसके उद्देश्य भी छपवाए थे और कुम्भ मेले के अवसर पर उसे प्रचारित किया गया था। इसमें शिक्षा का माध्यम हिन्दी रखने की बात कही गई थी। पर व्यावहारिकता ने पुनः मालवीय जी को काशी चुनने को बाध्य किया। महाराज भी अपने प्रस्तावित विश्वविद्यालय के लिए प्रयाग में स्थान चाहते थे। सरकार एक ही शहर में दो विश्वविद्यालयों का होना पसन्द नहीं करती थी। इस कारण से भी मालवीय जी ने काशी को चुना।

सर्वमेध-यज्ञ

1889 में अलीगढ़ विश्वविद्यालय की नींव पड़ी। सर सैय्यद अहमद खां ने विश्वविद्यालय की नींव इस्लाम के प्रचार के लिए डाली थी। अतः महामना के मन में हिन्दू धर्म की रक्षा की भावना जागृत हुई। मालवीयजी के अनन्य मित्र और परम सहयोगी सर सुन्दरलाल ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के लिए एक लाख रुपये का दान दिया। सन् 1913 में डा० एनी बेसेन्ट ने सेंट्रल हिन्दू कालेज को बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय का केन्द्र-विन्दु बनाने के दृष्टिकोण से सेंट्रल हिन्दू कालेज का कार्यभार मालवीयजी को सौंप दिया।

मालवीयजी ने झोला उठाने से पहले एक करोड़ बार गायत्री का जप किया। 'गजेन्द्रमोक्ष' का न जाने कितनी बार पाठ किया। आशाज्योति के प्रदीप्त हो जाने पर, महामना झोली उठाकर पिता का आशीर्वाद लेने के लिए पं० ब्रजनाथ के पास पहुंचे। पुत्र ने पिता के चरणों में सिर रखकर, इस कार्य के लिए आशीर्वाद मांगा। पिता ने पुलकित हृदय से अपने गृह त्यागी पुत्र को छाती से लगा लिया। कथावाचक पिता ने 50 रुपये दान में भी दिए। पुत्र यह दान पाकर आह्लाद और उत्साह से भर गया। तब से प्रयाग मालवीयजी का घर नहीं रहा। हिन्दू विश्वविद्यालय उनका घर हो गया। भरा-पूरा परिवार साथ ही श्रद्धामयी मां और स्नेहमयी भगिनी को भी इस तपस्वी ने हिन्दू विश्वविद्यालय के लिए त्याग दिया। बुद्ध के त्याग से क्या यह कम महान त्याग है ?

भारत राष्ट्र का अनुपम भिखारी

आचार्य कृपलानी ने विनोद में एक बार कहा था कि हिन्दू विश्वविद्यालय का निर्माण एक भिखारी ने किया है। मालवीयजी ने हिन्दू विश्वविद्यालय के लिए फकीरी धारण की और अन्त तक फ़कीर ही रहे। मालवीयजी अनेक बार यह दोहा कहा करते थे :—

'मरि जाऊं मांगू नहीं, अपने तन के काज।
परमारथ के कारने, मोहि न आवे लाज॥"

मालवीयजी की वक्तृता में अवश्य जादू था। पर सारा दान उन्होंने केवल इसी रीति से नहीं पाया। अनेक बार उनको पौरोहित्य करना पड़ा।

गुजरात के एक बडे सेठ से एक लाख रुपये पाने की आशा से मालवीयजी उससे मिलने गए थे। सेठ जानता था कि मालवीयजी की वाणी में जादू है और उसको वह जो मांगेंगे देना पड़ेगा। अतः उसने महामना से मिलने से ही इन्कार कर दिया। वह कभी मालवीयजी के सामने ही नहीं आया। महामना उससे भेंट करने का मौका ढूंढने लगे। सौभाग्य से उन दिनों श्राद्ध चल रहे थे। उस सेठ के यहां भी श्राद्ध था। बस, ब्राह्मण को और क्या चाहिए था ? मालवीयजी ने श्राद्ध-कार्य करने वाले ब्राह्मण का वेश धारण किया और पुरोहितों के साथ बैठ गए। सेठ ने उस समय मालवीय जी को पहचाना नहीं क्योंकि मालवीयजी अपना बाना छोड़े हुए थे। श्राद्ध भोजन में भी मालवीयजी सम्मिलित हुए। दक्षिणा देने का समय आया। सब ब्राह्मणों की पंक्ति में मालवीयजी महाराज को देखकर सेठ विस्मित हो गया। वह लज्जित भी था। उसने मालवीयजी के चरणों में कोरा चैक रख दिया और कहा, महाराज आज आप इच्छित राशि स्वयं: भर लें। भारत का सर्वश्रेष्ठ ब्राह्मण दक्षिणा पाकर आगे बढ़ गया।

निजाम हैदराबाद ने मालवीयजी को हिन्दू विश्वविद्यालय के लिए चन्दा देने से इन्कार कर दिया। महामना हताश होने वाले व्यक्ति नहीं थे। उन्होंने हैदराबाद के कुंजड़ों से चन्दा मांगना प्रारम्भ कर दिया। यह देखकर मालवीयजी से किसी ने पूछा, यह आप क्या कर रहे हैं ? कुंजड़ा जो धेला-पैसा-पैसा देंगे उससे क्या आपकी थैली भरेगी ? मालवीयजी ने कहा, भाई क्या करूं ? निजाम ने कहा कि वह गरीब हो गया है, अतः वह मुझे चन्दा नहीं दे सकता। अतः अब मैं हैदराबाद के लोगों से मांग रहा हूं। बूंद-बूंद से घट भरता है।

मालवीयजी की यह बात निजाम तक पहुंची। यह सुनकर कि मालवीयजी प्रचार कर रहे हैं कि निजाम गरीब हो गया है, अतः गरीबों से पैसा मांग रहे हैं, वह बड़ा प्रभावित हुआ। उसने एक लाख रुपये का चैक चुपचाप महामना मालवीयजी के पास भेज दिया। भारत राष्ट्र के भिखारी का मान रह गया।

दरभंगा नरेश का दान

कलकत्ते में महामना की भेंट दरभंगा नरेश रामेश्वर सिंह से हुई। नरेश कलकत्ते की एक विराट सभा का सभापतित्व कर रहे थे। महामना का इस सभा में अलौकिक और दिव्य भाषण हुआ। श्रोता मुग्ध हो गए। मालवीयजी का भाषण इतना प्रभावशाली था कि मंच पर रुपयों की वर्षा होने लगी। इस दृश्य और महामना के भाषण के साथ पहली भेंट में हुई बातचीत ने दरभंगा नरेश की भावनाओं को जगा दिया। सभापति पद से अन्तिम भाषण देते हुए दरभंगा नरेश ने घोषणा की कि वह हिन्दू विश्वविद्यालय को 25 लाख रुपये दान में देंगे। यह घोषणा अकल्पनीय और आशातीत थी। सारी सभा जय घोष से गूंज उठी।

मुजफ्फरपुर में एक अद्‌भुत दृश्य दिखाई दिया। मालवीयजी का भाषण सुनने के बाद वहां एक मजदूर ने दिन भर की कमाई महामना के चरणों में रख दी। एक मेहतर ने अपनी पहली कमीज़ भेंट कर दी। यह नीलाम भी की गई। यह कमीज़ विश्वविद्यालय के संग्रहालय में आज भी सुरक्षित है।

मुजफ्फरपुर (बिहार) में आयोजित एक सभा में काशी विश्वविद्यालय के लिए मालवीयजी को काफी धन मिला।

परन्तु इससे भी अधिक हृदयग्राही दृश्य बगाली प्रोफेसर के घर पर दिखाई दिया। प्रोफेसर महोदय एक सभा में दान देकर आए थे। मालवीयजी उनको धन्यवाद देने के लिए उनके घर आए। प्रोफेसर की सतीसाध्वी दानशीला पत्नी ने भारत राष्ट्र के महान् भिखारी को अपने द्वार आया देखकर अपने दोनों स्वर्ण कंगन हिन्दू विश्वविद्यालय को भेंट कर दिए। पति महोदय ने उनका नगद मूल्य देकर कंगन वापस लेकर पत्नी को दे दिए। पर दानशीला भारतीय नारी ने वह दोनों कंगन पुनः महामना की झोली में डाल दिए। ये कंगन भी विश्वविद्यालय के संग्रहालय में सुरक्षित हैं।

मालवीयजी का व्रत

मालवीयजी की भिक्षा मण्डली अमृतसर पहुंची। हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्थापक महान् तपस्वी ने एक व्रत ले रखा था। वह था, जब तक दिन भर की संकल्पित व निश्चित दान राशि एकत्र न हो जाए, तब तक भोजन न करना। अमृतसर में एक दानी के पास मालवीयजी अपनी भिक्षा मण्डली सहित पहुंचे। दोपहर का एक बज रहा था। सबको भूख सता रही थी। अमृतसर के अनुभवी और चतुर सेठ ने मण्डली के मुखों को देखकर खाने की व्यवस्था की। पर मण्डली ने उसको ऐसा करने से रोक दिया। कारण पूछने पर ज्ञात हुआ कि जब तक दिन भर की संकल्पित निश्चित रकम प्राप्त न होगी, भिक्षा मण्डली का नेता महान् तपस्वी अन्न का दाना मुंह में न डालेगा। उसके भूखे रहते हुए और लोग कैसे खा सकते हैं? सेठ यह सुनकर महामना मालवीयजी के तपःपूत चरणों में लोट गया। उसने चैक बुक निकाली और उस दिन की संकल्पित निश्चित राशि अकेले दे दी। मण्डली महामना के इस पुण्य प्रताप को देखकर चकित रह गई। यह राशि दानी सेठ ने उससे कहीं अधिक दी थी, जितनी की आशा लेकर मालवीय की मण्डली उसके पास पहुंची थी। इसके बाद व्रत पूर्ण हो जाने पर महामना ने और उनकी मण्डली ने भोजन किया।

चार्टर की समस्या

हिन्दू विश्वविद्यालय को चार्टर दिलाने के प्रश्न ने देश भर को आन्दोलित और उत्तेजित कर दिया। शिमला की एक सभा में पंजाब केसरी लाला लाजपत राय ने सिंह गर्जन करते हुए कहा··· "चार्टर मिले या ना मिले, विश्वविद्यालय अवश्य स्थापित होगा।" इस सभा में मालवीयजी का अन्तिम भाषण था। महामना ने इसको लक्ष्य करके कहा···"चार्टर और विश्वविद्यालय दोनों ही मैं प्राप्त करके रहूंगा।" लाहौर में भी यह ध्वनि गूंजती रही।

चार्टर के लिए विश्वविद्यालय की स्थापना के बाद जब महामना ने वायसराय की कौंसिल के शिक्षा सदस्य सर हरकोर्ट बटलर से भेंट की तो उन्होंने स्पष्ट भाषा में कहा, सरकार आपको उस समय तक चार्टर देने की बात भी नहीं सोच सकती, जब तक आप विश्वविद्यालय में शिक्षा का माध्यम हिन्दी रखने की बात करते हैं। अंग्रेजी माध्यम रखिए, और चार्टर लीजिए। बात को स्पष्ट करते हुए बटलर ने कहा, जब तक आप अंग्रेजी में पढ़ाते हैं, तब तक हमें पता रहता है कि आप क्या पढ़ा रहे हैं और अगली पीढ़ी क्या सोचेगी, और क्या बनेगी। परन्तु जब आप अंग्रेजी को छोड़कर हिन्दी में पढ़ाने लगते हैं, तब हम अन्धेरे में रहते हैं और आपको ठीक-ठाक जान नहीं पाते। हम ब्रिटिश साम्राज्य को खतरे में नहीं डालना चाहते।

बटलर के इस कथन के बाद मालवीयजी ने अंग्रेजी के माध्यम से शिक्षा देना स्वीकार कर लिया। बटलर ने शीघ्र ही एक विशेष एक्ट बनाकर विश्वविद्यालय को चार्टर देने की बात का आश्वासन दे दिया। आर्थिक सहायता देने का भी वचन दिया। बटलर से भेंट करने के बाद जब महामना वापस

आए तब उनके चेहरे पर विजय का उल्लास न था। पराजय की खिन्नता और आत्म-ग्लानि थी। बाबू शिवप्रसाद गुप्त द्वार पर ही उनकी प्रतीक्षा में बैठ थे।

महामना को उदास मुख देखकर उन्होंने समझा कि बटलर ने महामना का अपमान किया है। उन्होंने आवेश में पूछा, "बाबू, आपको क्या हुआ? आप दुःखी जान पड़ते हैं।" महामना ने अपने आन्तरिक विषाद को छिपाते हुए कहा, "कुछ नहीं चार्टर मिल गया है। पर शिक्षा का माध्यम हिन्दी नहीं, अंग्रेजी होगा।" यह सुनते ही बाबू शिवप्रसाद गुप्त को तो काठ मार गया और बोल उठे—

"हिन्दू विश्वविद्यालय मर गया।"

इन शब्दों में भारत की हृदय वेदना ही प्रकट हुई थी।

महामना ने हिन्दी के माध्यम प्रश्न को स्थगित कर दिया। यदि माध्यम का आग्रह रखते, तो भारतीय शिक्षा-व्यवस्था और प्रणाली में एक महती क्रान्ति कर देते। महामना सुधारवादी थे, और आहिस्ते-आहिस्ते कदम उठाने वाले थे। क्रान्ति की बात उनके क्षेत्र से बाहर थी।

महोत्सव

चार्टर मिलते ही रास्ता साफ हो गया। इम्पीरियल कौंसिल में सरकार ने ही इस विश्व-विद्यालय के लिए एक्ट बनवाया। हिन्दु विश्वविद्यालय अखिल भारतीय विश्वविद्यालय माना गया। भारत सरकार ने इसको हर साल तीन लाख रुपया आर्थिक सहायता देना स्वीकार कर लिया।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय आज जिस जगह बना हुआ है, वह भूमि काशी नरेश ने दान में दी। पहले काशी नरेश इस भूमि को महामना को देना नहीं चाहते थे। काशी नरेश की अनिच्छा देखकर महामना मौन हो गए। एक दिन प्रातःकाल गंगा तट पर घाट पर पहुंच गए, जहां काशी नरेश प्रतिदिन स्नान-पूजन करते थे। महामना ने उस दिन काशी नरेश का पौरोहित्य किया, और दक्षिणा देने का समय आया तो काशी नरेश ने महामना को वह भूमि दे दी, जिसपर आज विश्वविद्यालय की सुन्दर और शानदार इमारतें बनी हुई हैं। इसका शिलान्यास भारत के तत्कालिक वायसराय लार्ड हार्डिंग ने 1916 में वसन्त पंचमी के दिन किया। इस महोत्सव में प्रान्तों के सब गवर्नर, भारत के देशी नरेश, भारत भर के विद्वान, राजनीतिज्ञ, वकील, बैरिस्टर, जज और महात्मा गांधी उपस्थित थे।

पांच वर्गमील में

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय पांच वर्गमील में फैला हुआ है। छात्रावास ही एक मील तक है। शिक्षकों के निवास स्थान एक ओर हैं। शिवाजी हाल के एक ओर बड़ी व्यायामशाला है। आयुर्वेद महाविद्यालय है, फार्मेसी है। इंजीनियरिंग कालेज है। मुख्यतः विश्वविद्यालय के दो भाग हैं, प्राच्य और प्रतीच्य या विज्ञान विभाग। हिन्दू विश्वविद्यालय भारत का पहला विश्वविद्यालय है जहां सर्वप्रथम यांत्रिक, एवं बिजली इंजीनियरिंग की शिक्षा देने की व्यवस्था की गई। इससे पहले इंजीनियरिंग शिक्षा भवन-निर्माण और सड़क निर्माण तक ही सीमित थी।

यह अनोखा विश्वविद्यालय है। यहां खड़ांऊ पहनने वाले और लम्बी चोटी रखने वाले छात्र भी पढ़ते हैं। धोती कुर्त्ता पहनकर भी लड़के कक्षाओं में जाते हैं। नए फैशन के छात्रों की कमी नहीं। इसकी दूसरी विशेषता है कि गरीब छात्र दूध बेचकर, छोटी-मोटी दूकान चलाकर या साधारण काम करके शिक्षा प्राप्त करते हैं। शिक्षा ग्रहण करने में गरीबी यहां बाधक नहीं।

कुलपति मालवीयजी

मालवीयजी हिन्दू विश्वविद्यालय के 1939 तक कुलपति या बाइस चांसलर रहे। कुलपति

मालवीयजी का पृथक् ही रूप है। कोई भारतीय, इतने दीर्घ काल तक किसी विश्वविद्यालय का कुलपति नहीं रहा।

कुलपति मालवीयजी का विश्वविद्यालय में निवास स्थान काशी के विश्वनाथ जी के मन्दिर के समान एक दर्शनीय और तीर्थ स्थान था। मालवीयजी महाराज का दरबार पूजा-पाठ के बाद जो लगता, वह रात ग्यारह बजे तक चलता। दर्शनार्थी, मुलाकाती, प्रार्थी, दुःखी, परामर्श करने वाले, विद्यार्थी, कार्यकर्त्ता, जिज्ञासु, उपदेशक, नेतागण, आदि सभी तरह के लोग आते। गांव वाले दूर-दूर से आते। उनके दरबार से कोई भी निराश होकर नहीं जाता था।

विश्वविद्यालय का रजिस्ट्रार तो महामना को छात्रों की दादी-नानी कहता था। क्योंकि उसके किए को महामना चलने नहीं देते थे। कुलपति मालवीयजी के समय 15 प्रतिशत छात्रों की फ़ीस माफ रहती थी। परन्तु यह प्रतिशत 20 तक पहुंच जाता था। नियमों से बंधा रजिस्ट्रार इस कारण सदा चिन्तित रहता। अन्तिम दिनों में महामना को दुःख था कि विश्वविद्यालय के कोर्ट ने फीस माफ करने का प्रतिशत घटाकर दस प्रतिशत कर दिया है। मालवीयजी की अपनी इच्छा इसको पच्चीस प्रतिशत ले जाने को थी। उनका कहना था कि गरीबी किसी विद्यार्थी के अध्ययन में बाधा न होनी चाहिए।

महामना प्रातः व सायंकाल, विश्वविद्यालय में ही घूमते थे। घूमते हुए विश्वविद्यालय में चल रहे नए-नए कार्यों को भी देखते, बन रहे नए भवनों को देखते। सड़कों पर आते-जाते छात्रों से कुशल-प्रश्न करते। कुलपति मालवीयजी सदा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के छात्रों को कसरत करने और लंगोट पहनने का उपदेश करते थे। स्नातकों से भेंट होने पर कुलपति मालवीयजी पुराने छात्रों से तीन प्रश्न करते थे : (1) कसरत करते हो ? (2) दूध पीते हो ? (3) कितने बच्चे हैं ?

हिन्दू विश्वविद्यालय ही एक ऐसा विश्वविद्यालय है, जहां हर शनिवार को गीता प्रवचन होता है।

कुलपति मालवीयजी अपने अतिथियों का बड़ा ख्याल रखते थे। उनको भोजन कराए बगैर कभी भोजन नहीं करते थे। इससे कभी-कभी भोजन की बेला भी टल जाती थी परन्तु महामना के शास्त्र-विहित नियम में कभी परिवर्तन नहीं हुआ। महामना अपने अतिथि की सुख-सुविधा का कितना ख्याल रखते हैं, इसका गांधीजी ने सुन्दर वर्णन किया है। खुद सब असुविधाओं और कष्टों को उठाते हुए मालवीयजी अपने अतिथि को यथाशक्ति सुखी बनाने का प्रयत्न करते थे। इसमें वह छोटे-बड़े का भेद नहीं करते थे।

क्षमामूर्ति कुलपति

कुलपति का टाइपिस्ट अपने काम में बहुत चुस्त और सिद्धहस्त था। पर था झक्की और सनकी। एक बार महामना ने टाइपिस्ट को बुला भेजा। टाइपिस्ट नहीं आया। दूसरी बार बुलाने पर उसने कहला भेजा कि अभी वह नहीं आ सकता। उस समय अनेक नेता और बड़े-बड़े सेठ बैठे हुए थे। सब लोग यह जानने को उत्सुक थे कि महामना अपमान करने वाले टाइपिस्ट से कैसे बरतते हैं ? कुछ देर बाद टाइपिस्ट आया। मालवीयजी ने पूछा, "देर क्यों कर दी।" "वह बोला," रात नींद नहीं आई थी। विश्राम कर रहा था।" महामना ने झट कहा, "जाओ, पहले सो जाओ।" टाइपिस्ट चला गया। उपस्थित लोग क्षमामूर्ति कुलपति को विस्मित नेत्रों से देखते रहे।

एक बार मालवीयजी एक नरेश के अतिथि थे। साथ में यह टाइपिस्ट भी था। महाराजा का टेंट महामना के पास ही लगाया गया था। टाइपिस्ट भी उसके पास ही ठहरा था। वह एक समय भोजन बनाता था। एक शाम जब वह भोजन बना रहा था, तो चारों ओर धुआं ही धुआं हो गया। इसी समय

महामना आ गए। उन्होंने धुआं देखकर कहा, "भाई, जरा और हटकर अपना चूल्हा जोड़ लिया होता।" टाइपिस्ट बोला, "आपकी बात क्या ? आप तो महलों में ठहरते हैं। 24 घंटों में एक बार भोजन करने वाला इतनी देर से धुआं सह रहा है, और आप कुछ समय के लिए भी धुआं नहीं सह सकते।" मालवीय जी मौन रह गए।

कुलपति के पास एक दिन टाइपिस्ट त्याग-पत्र लेकर उपस्थित हुआ। त्याग-पत्र में कोई कारण नहीं दिया गया था। मालवीयजी ने जब बहुत पूछा, तब उसने बताया कि उसके चौके में कुलपति के पुत्र जूता पहने आ गए। वह धर्म-भ्रष्ट होने के लिए विश्वविद्यालय में नौकरी करने नहीं आया है। मालवीयजी ने उसको रोकने की बहुत कोशिश की पर वह नहीं माना। वह चला ही गया। पर बेकारी से तंग हो जाने पर जब वह लौटा, तब वह अपने स्थान पर बहाल हो गया। यह थे क्षमामूर्ति कुलपति।

वकालत करते हुए मालवीयजी ने देखा कि कचहरियों में उर्दू का राज है और इसके कारण सामान्य जनता को बड़ी कठिनाई होती थी। अतः कचहरियों में नागरी लिपि जारी करने के लिए महामना ने महान प्रयत्न प्रारम्भ किया। इस आन्दोलन को दृढ़ ज्ञान-भूमि पर खड़ा करने के लिए महामना ने बड़े परिश्रम और बड़ी खोज से एक पुस्तक लिखी।

इसी पुस्तक के आधार पर संयुक्त प्रान्त या उत्तर प्रदेश के ले० गवर्नर सर आरनाल्ड मैक्डानल्ड को दिया जाने वाला स्मृति-पत्र तैयार किया गया था। गवर्नर के पास महामना मालवीयजी ही डेपुटेशन लेकर गए थे। इस स्मृति-पत्र में नागरी लिपि की श्रेष्ठता को प्रकट करने के लिए जो बातें कहीं थीं, वे ऐतिहासिक महत्व रखती हैं। हिन्दी के इतिहास में उनका महत्व है। आज भी वह उतनी ही सत्य है, जितना कि वह 1895 में था। इसमें नागरी लिपि को सर्वश्रेष्ट बताते हुए कहा गया था :

"नागरी अक्षरों का कोई कितना ही बड़ा विरोधी और घोर शत्रु क्यों न हो, वह यह नहीं कह सकता कि इसमें किसी प्रकार की त्रुटि है। इन अक्षरों की मनोहारिता, सुन्दरता, स्पष्टता, पूर्णता और शुद्धता की विद्वानों ने केवल प्रशंसा ही नहीं की है, बल्कि उसी के आधार पर रोमन में अन्य भाषाओं के शब्दों के लिखने के लिए नियम और चिन्ह बनाए गए हैं।"

"प्रोफेसर मोनियर विलियम्स कहते हैं कि स्थूल रूप से यह कहा जा सकता है कि देवनागरी अक्षरों से बढ़कर पूर्ण और उत्तम अक्षर दूसरे नहीं हैं। प्रोफेसर साहब ने तो इनको देव-निर्मित तक कहा है।"

"सर आइजेक पिटमैन ने कहा है कि संसार में यदि कोई सर्वांगपूर्ण अक्षर हैं तो नागरी के हैं।

"यू० पी० की कचहरियों में नागरी लिपि के चलन से, राजस्थान और मध्यभारत की देशी रियासतों की अदालतों में हिन्दी को स्थान मिला। अदालतों में हिन्दी को मान्यता मिलने से शिक्षित वर्ग में, हिन्दी के प्रति अनुराग बढ़ा। हिन्दी आज जिस स्थिति में है, उसके लिए वह मालवीयजी की ऋणी है।

काशी नागरी प्रचारिणी सभा

महामना मालवीयजी ने काशी नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना में भी योग दिया। यही नहीं इसकी इतिहास उपसमिति के अध्यक्ष मालवीयजी थे। इसके दो अन्य सदस्य थे : महामना मुन्शीराम और लाला लाजपत राय। इतिहास समिति ने ही श्री रमेशचन्द्र दत्त लिखित 'प्राचीन भारतीय सभ्यता के इतिहास' का हिन्दी अनुवाद चार खण्डों में प्रकाशित किया था। यह ग्रंथ बेजोड़ है। भारतीय साहित्य एवं संस्कृति का ऐसा व्यापक और सर्वग्राही इतिहास अबतक दूसरा नहीं मिलता इस कारण यह ग्रंथ आज भी अनमोल बना हुआ है।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थापना

महामना मालवीयजी ने अभी प्रयाग छोड़ा नहीं था, और काशी में स्थिर रूप से रहना प्रारम्भ नहीं किया था। किन्तु काशी के महत्व को देखते हुए, उन्होंने काशी नागरी प्रचारिणी सभा को हिन्दी साहित्य सम्मेलन का आयोजन करने की प्रेरणा दी। इस प्रकार हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थापना हुई। इसका प्रथम अधिवेशन काशी में हुआ और महामना मालवीयजी उसके सर्वसम्मति से अध्यक्ष चुने गए।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने जहां हिन्दी प्रमियों को एक मंच दिया, साहित्यिक चर्चा का एक केन्द्र दिया, वहां इसने साहित्य के सृजन को भी प्रोत्साहन दिया और राष्ट्र भाषा का प्रचार करने वाले त्यागी युवकों को जन्म दिया। हिन्दी का प्रचार और प्रसार करके, हिन्दी परीक्षाएं चलाकर सम्मेलन ने ज्ञान की सरिता प्रवाहित की। महामना मालवीयजी की प्रेरणा से प्रोत्साहन मिलने और सहायता देने से सम्मेलन की स्थापना हुई। छात्रावस्था में ही उनका हिन्दी से लगाव पदा हो गया था। उन्होंने स्वभाषा प्रेम संस्कृत के पढ़ने से प्राप्त किया था। यही कारण है कि उन्होंने कालेज की शिक्षा समाप्त करने के बाद प्रयाग में हिन्दी उद्धारिणी सभा (1884) की स्थापना की थी।

सम्मेलन जब अहिन्दी प्रान्तों में गया, तब फिर सम्मेलन ने महामना को स्मरण किया और उनको बम्बई में हुए साहित्य सम्मेलन का सभापति चुना।

1918 में महामना मालवीयजी दिल्ली कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गए थे। इस मौके पर मालवीय जी ने सभापति पद से अपना भाषण हिन्दी में ही दिया। स्वागताध्यक्ष हकीम अजमल खां थे। उन्होंने उर्दू में लिखित भाषण पढ़ा था। कांग्रस में हिन्दी का श्रीगणेश महामना मालवीयजी ने ही किया था।

इलाहाबाद विश्वविद्यालय की स्वर्ण जयन्ती पर महामना को दीक्षान्त भाषण देने के लिए आमंत्रित किया गया था। महामना ने दीक्षान्त भाषण हिन्दी में दिया। यह थी मालवीयजी की हिन्दी भक्ति। यह था, उनका अपनी भाषा के प्रति अनुराग। स्वभाषा भक्ति देशभक्ति का एक अंग है। यह मानन के कारण महामना हिन्दी का व्यवहार बढ़ाने में सदा तत्पर रहे। यद्यपि उन्होंने कभी अंग्रेजी हटाओ का आन्दोलन नहीं किया।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय पहला विश्वविद्यालय है, जिसने एम०ए० में डा० श्यामसुन्दर दास, कवि सम्राट अयोध्यासिंह उपाध्याय "हरिऔध", आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, और प्रसिद्ध टीकाकार ला० भगवान दीन सदृश विख्यात विद्वानों को हिन्दी संकाय में स्थान दिया। इसके कारण हिन्दी में एक नए ढंग का समीक्षात्मक ग्रन्थ और आलोचनात्मक साहित्य का निर्माण हुआ।

●

स्वतन्त्रता संग्राम के सेनानी

मालवीयजी की राष्ट्रीयता और भारतीयता मौलिक थी। अंग्रेजी साहित्य की देन नहीं थी। वे देशभक्ति को हिन्दू धर्म का एक अंग मानते थे। भारत में प्रचलित विभिन्न भाषाओं तथा अगणित जाति-भेदों को मालवीयजी राष्ट्रीय एकता में बाधा नहीं मानते थे। उनका कहना था कि भारत के सामने विदेशी शासन को हटाने का एक ऐसा उद्देश्य है जो सारे देश को एक सूत्र में बांधता है। इसलिए वे प्रतिदिन पाठ करते थे :

"जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी"

कांग्रेस का दूसरा अधिवेशन दादाभाई नौरोजी की अध्यक्षता में कलकत्ता में हुआ। इस अधिवेशन में महामना का पहला राजनीतिक भाषण हुआ। भाषण दस मिनट का ही था। पर 26 साल के युवा के भाषण में 22 बार तालियां बजीं। मालवीयजी को सब लोग देख सकें, इस विचार से उनको मेज पर खड़ा किया गया। मेज पर खड़े होकर उन्होंने दस मिनट तक भाषण दिया।

मालवीयजी का शुद्ध उच्चारण, संगीतमय मधुर स्वर, शान्त मुख-मुद्रा और शुभ्र वस्त्र सिर पर बंधी पगड़ी और गले में पड़ा दुपट्टा, माथे पर लगे चन्दन, इन सबने भाषण को आकर्षक बना दिया। इस भाषण ने युवक मालवीयजी को भारत का एक विख्यात नेता बना दिया। कांग्रेस के सफल वक्ताओं में उनका स्थान अगली पंक्ति में हो गया। कांग्रेस के जनरल सेक्रेटरी ह्यूम ने अपनी वार्षिक रिपोर्ट में लिखा कि कलकत्ता कांग्रेस की सबसे बड़ी विशेषता थी : 26 वर्ष की आयु के गौर वर्ण के ब्राह्मण युवक का भाषण, जिस पर सबसे अधिक तालियां बजीं।

इस भाषण के साथ मालवीयजी ने कांग्रेस में और राजनीति में प्रवेश किया। महामना मालवीयजी के जीवन ने एक नया मोड़ लिया।

कांग्रेस के संगठनकर्त्ता

कांग्रेस का तीसरा अधिवेशन मद्रास में हुआ। बदरुद्दीन तैयबजी इसके सभापति थे। महामना इसमें यू०पी० से 45 प्रतिनिधि लेकर पहुंचे थे। वहां उनका हृदयग्राही भाषण हुआ। उन्हें कांग्रेस का संगठन मंत्री बनाया गया। इस समय महामना सम्पादक थे, वकील न थे। अगले साल मालवीयजी ने प्रयाग में कांग्रेस का अधिवेशन करने का निमन्त्रण दिया। प्रयाग में कांग्रेस का चौथा अधिवेशन हुआ। इस अधिवेशन की स्वागत समिति के मन्त्री महामना थे और स्वागताध्यक्ष अयोध्यानाथ कुंजरू थे।

महारथी और सेनानी

1909 में कांग्रेस का अधिवेशन लाहौर में हुआ। इसके सभापति सर फिरोजशाह मेहता चुने

गए थे। किन्तु किन्हीं कारणों से उन्होंने अधिवेशन से केवल 6 दिन पहले अपनी असमर्थता प्रकट की। तब मालवीयजी से प्रार्थना की गई। महामना ने सभापति पद ग्रहण करना स्वीकार कर लिया। इस मौके पर महामना ने संस्कृत के नाटक वेणी संहार के अनेक उद्धरण दिए। कांग्रेस के मंच से संस्कृत का व्यवहार इससे पहले नहीं हुआ था।

1910 में पुनः प्रयाग में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। मालवीयजी ने इसको पूर्ण सफल बनाया। इस मौके पर स्वदेशी वस्तुओं की एक बड़ी प्रदर्शनी भी हुई। मालवीयजी छात्रावस्था से ही स्वदेशी कपड़े पहनते थे और स्वदेशी वस्तुओं का व्यवहार करते थे। स्वदेशी व्यापार को बढ़ाने के लिए मालवीयजी ने अपने मित्रों और सहयोगियों की मदद से एक तिजारती कम्पनी भी स्थापित की थी। देशी उद्योग धन्धे को चलाने के लिए फण्ड भी चलाया।

1918 में मालवीयजी फिर से कांग्रेस के सभापति निर्वाचित हुए। इस बार भी आप एवजी सभापति थे। इस अवसर पर भी उन्होंने कांग्रेस के अध्यक्ष पद से हिन्दी में भाषण दिया।

मालवीयजी के उद्योग से इस कांग्रेस में 100 किसान प्रतिनिधि निःशुल्क आने दिए गए थे। यह पहला मौका था, जब कांग्रेस ने किसानों को अपनाया। मालवीयजी 1886 से 1936 तक (फैजपुर की कांग्रेस तक) कांग्रेस के अधिवेशनों में सम्मिलित होते रहे। जयपुर कांग्रेस के समय उनकी आयु 76 वर्ष की थी। इसी से ज्ञात होता है कि कांग्रेस के प्रति उनकी कितनी भक्ति और श्रद्धा थी।

असम यात्रा

1928 में गांधीजी को सरकार ने 6 साल के लिए जेल भेज दिया। देश में घोर निराशा छा

असम के लोगों के साथ बात करते हुए मालवीयजी

गई। एक साल के भीतर स्वराज पाने का स्वप्न देखने वाले हतोत्साह होकर बठ गए। उधर सरकार का दमन चक्र तेजी से चल रहा था। असम में घोर दमन हो रहा था। वहां की जनता ने मालवीयजी को रक्षा के लिए स्मरण किया। महामना कांग्रेस के एक मन्त्री डा० राजेन्द्रप्रसाद को साथ लेकर असम गए। असम की यात्रा महामना ने पैदल, नाव में बैठकर, बैलगाड़ी द्वारा की। जंगल पार किए, पहाड़ लांघे और दूर-दूर के गांव तक गए। अनेक बार प्रतीत होता था कि शेर हमला करने वाला है, लेकिन मालवीयजी ने यात्रा रोकी नहीं। बैलगाड़ी को चलता ही रखा। शेर ही भाग गया। मालवीय जी पहले अखिल भारतीय कमेटी के नेता थे, जो कभी असम गए थे। असम ने पहली बार अनुभव किया कि वह भारत का एक अंग है और उसका सुख-दुःख सारे भारत का सुख-दुःख है। मालवीयजी की इस यात्रा का फल यह हुआ कि असम भारतीय स्वाधीनता संग्राम में सदा अगली पंक्ति में रहा।

महामना ने इस मौके पर पेशावर से कलकत्ते तक का भी दौरा किया था। पंजाब और यू० पी० के अनेक जिलों में, और तो और गोरखपुर ने 144 धारा लगा दी और मालवीयजी के आने पर रोक लगा दी। परन्तु महामना के वहां पहुंचते ही 144 धारा खतम हो गई। सरकार ने महामना को गिरफ्तार करने और जेल भेजने का साहस नहीं किया। लार्ड रीडिंग महामना के प्रभाव और उनके जेल भेजने के परिणाम से परिचित था। मालवीयजी कलकत्ता रवाना हो गए। कलकत्ता पहुंचे। सरकार ने प्रतिबन्ध का हुक्म वापस ले लिया।

पहली गिरफ्तारी

1932 में पुनः राष्ट्र ने मालवीयजी की ओर आशा भरी दृष्टि से देखा। कांग्रेस इस समय गैर-कानूनी संस्था थी। सब नेता जेलों में बन्द थे। 1931 की कराची कांग्रेस में सरदार भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरु को फांसी दिए जाने के विरोध में और उनको श्रद्धांजलि अर्पित करने का प्रस्ताव महामना ने पेश किया था। युवकगण इनको फांसी दिए जाने से कितने क्षुब्ध थे इसका अनुमान इस बात से किया जा सकता है कि जब महात्मा गांधी कराची जाते हुए पंजाब से गुजरे, तो युवकों ने अंगूठे काट-काट कर अपने रक्त से उनका तिलक किया था। युवा भारत के इस उग्र भाव को शान्त करने का कार्य महामना मालवीयजी को सौंपा गया था।

1932 में स्थिति भिन्न थी, कांग्रेस नेता-विहीन थी। जेलें भरी हुई थीं। गैर कानूनी कांग्रेस के अधिवेशन का आयोजन आचार्य कृपलानी और उनके गांधी आश्रम के सहयोगियों ने किया था। सरकार नहीं चाहती थी कि यह आयोजन हो। दिल्ली में कांग्रेसियों के आने पर रोक थी। भेष बदल कर ही कांग्रेसी दिल्ली में आ पाते थे। योजना यह थी कि मालवीयजी को एकाएक गुपचुप मंच पर लाकर खड़ा कर दिया जाए। मालवीयजी के भाषण होने और कुछ प्रस्ताव पेश करने के बाद कांग्रेस का अधिवेशन समाप्त कर दिया जाए। परन्तु मालवीय सच्चे योद्धा थे। वह लुक-छिपकर चतुराई से काम लेने के विरोधी थे। फलतः जब मालवीयजी की मोटर जमुना के पुल पर पहुंची तो भारत का यह महान् योद्धा और आधुनिक द्रोणाचार्य, माता स्वरूपरानी और श्री रणजीत पंडित के साथ गिरफ्तार कर लिया गया। इस अवसर पर मालवीयजी ने कहा "निडरता ही स्वतन्त्रता का एकमात्र मार्ग है।" तीनों हिरासत में रखे गए और बाद में प्रयाग वापस भेज दिए गए। कांग्रेस का अधिवेशन हुआ और पुलिस चूक गई।

1933 में गैरकानूनी कांग्रेस का अधिवेशन कलकत्ता में आयोजित किया गया। पुनः महामना को स्मरण किया गया। मालवीयजी यू० पी० के प्रतिनिधियों के साथ आसनसोल तक पहुंच गए। पर यहां से आगे नहीं बढ़ने दिए गए। तीन दिन जेल में रखने के बाद काशी लौटा दिए गए।

ब्रिटिश सरकार को अल्टीमेटम

1917 में शिमला में जब कौंसिल का अधिवेशन हुआ, तो एक दिन अध्यक्ष के आसन पर पंजाब के गवर्नर सर माइकेल ओडायर थे। मालवीयजी भारत को स्वराज्य देने का प्रस्ताव पेश कर रहे थे। सर माइकेल ने बराबर मालवीयजी को टोकने की कोशिश की। इस पर महामना ने अध्यक्ष से प्रार्थना की कि उनको टोका न जाए, तथा बात पूरी कहने दी जाए। पर, सर माइकेल ओडायर आदत से लाचार था। वह बराबर बाधा देता रहा। इससे प्रशान्त, गम्भीर महामना भी क्षुब्ध हो गए। वह अपना अपमान नहीं सह सकते थे। वह यह कहकर सदन से बाहर निकल गए कि अब वह कौंसिल में कभी न आयेंगे। वाइसराय की कौंसिल के भारतीय सदस्य सर शंकर नय्यर भी उठकर लाबी में चले गए। उपस्थित निर्वाचित भारतीय सदस्य भी एक-एक करके मालवीयजी के साथ उठ गए। भारत के संसदीय इतिहास में 'वाक-आउट' की यह पहली घटना थी।

संसदीय मोर्चे पर

महामना का भारतीय राजनीति में असली रणक्षेत्र संसदीय मोर्चा था। यहां मालवीयजी अप्रतिम थे। मालवीयजी ने यू०पी० प्रांतीय कौंसिल के सदस्य के रूप में और इम्पीरियल कौंसिल एवं केन्द्रीय असेम्बली में निरन्तर 27 साल तक जनता की ओर से जो लड़ाई लड़ी, वह एक रणबांकुरे महारथी को शोभा देने वाली थी। यह जानते हुए भी कि भाषणों की लड़ाई से कुछ फल निकलने वाला नहीं है, ब्रिटिश सत्ता से मोर्चा लेने में और उस पर प्रहार करने में मालवीयजी कभी नहीं चूके। उनके वहां दिए गए भाषणों की गूंज तो आज भी देश में यदा-कदा सुनाई दे जाती है। उनके जैसा धाराप्रवाह भाषण देने वाला अभी तक कोई दूसरा भारतीय नहीं हुआ।

क्षमा दान बिल

सन् 1919 में पंजाब में मार्शल-ला के दिनों में जनता पर भीषण जुल्म किया गया। स्त्रियों बच्चों तक को तंग गलियों में रेंग-रेंग कर चलने को बाध्य किया गया। जुल्म और अत्याचार करने वाले अधिकारियों को दण्डित न करने के लिए यह कानून बनाया गया था। मालवीयजी ने इस बिल के विरोध में 6 घण्टे तक भाषण दिया था। उन्होंने पंजाब का आंखों देखा हाल ऐसी भाषा में बयान किया कि सदस्य भी रो पड़े। वाइसराय की कौंसिल के सदस्यों से ही इसके विरोध में राय प्रकट कराई जो एक अपूर्व बात थी।

केन्द्रीय असेम्बली में फाइनेंस बिल

1924 का असेम्बली का बजट अधिवेशन भारतीय राजनीति में महत्वपूर्ण था। महामना इण्डिपेण्डेण्ट पार्टी के सदस्य के रूप में असेम्बली में यह दिखाने के लिए गए थे कि अंग्रेज भारत पर भारतीय जनता की सहमति एवं स्वीकृति से शासन नहीं कर रहे थे। यह प्रदर्शित करने के लिए स्वराज्य पार्टी और इण्डिपेण्डेण्ट पार्टी ने फाइनेंस बिल रद्द करने का दृढ़ संकल्प किया। महामना मालवीयजी को इस मोर्चे का नेतृत्व प्रदान किया गया। इस मौके पर फ़ाइनेंस बिल को रद्द कर देने के प्रस्ताव पर महामना ने जो ओजस्वी भाषण दिया, जो अकाट्य तर्क दिये, उसकी चर्चा देश भर में बहुत दिनों तक होती रही। इस भाषण का प्रभाव इससे प्रकट है कि असेम्बली के नामजद सदस्य और मजदूर नेता श्री जोशी ने फाइनेंस बिल के विरोध में वोट दिया।

शारदा एक्ट

श्री हरबिलास शारदा (अजमेर) ने असेम्बली में बाल-विवाह निषेधक एक बिल पेश किया

था, जो 14 साल की आयु से कम लड़कियों और 18 साल से कम लड़कों का विवाह करना जुर्म करार देता था। महामना मालवीयजी की मान्यता थी कि सामाजिक सुधार कानून के जोर पर न होने चाहिए, वह समाज की अपनी इच्छा से होने चाहिए।

मालवीयजी तीन साल तक प्रयाग म्युनिसिपैलिटी के उपाध्यक्ष रहे। इसी प्रकार 1903 से यू० पी० की प्रान्तीय कौंसिल के भी 6 साल तक सदस्य रहे। किसानों के लिए भूमिव्यवस्था में सुधार कराने का प्रयत्न किया। और किसानों को अधिकार दिलाने की भरसक कोशिश की। 1909 में 'मार्ले-मिन्टो' शासन सुधार होने पर यू० पी० से इम्पीरियल कौंसिल के सदस्य चुने गए।

महामना जेल में

पेशावर गोली-कांड की जांच कमेटी में कार्य करने के बाद मालवीयजी का ध्यान देश में चल रहे सविनय कानून भंग आन्दोलन की ओर गया। 1 अगस्त को लोकमान्य का दिवस मनाते हुए श्रीमती हंसा मेहता की अध्यक्षता में कांग्रेस का एक विराट जलूस निकाला गया। कांग्रेस गैर-कानूनी संस्था घोषित की जा चुकी थी। अत: यह जलूस गैर-कानूनी था। मालवीयजी और सरदार पटेल इस जुलूस में सम्मिलित थे। रिमझिम वर्षा हो रही थी। पर जलूस का जोश मेघगर्जन को चुनौती दे रहा था। आर्थर रोड पर जलूस पहुंचा, तब वह पुलिस द्वारा रोक दिया गया। नेतागण वहां से मोटर में बिठा कर जेल भेज दिए गए। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में जब यह खबर पहुंची कि उनका कुलपति बन्दी बना लिया गया है, तो छात्रों का जोश समुद्री तूफान के समान लहराने लगा। लगभग 500 विद्यार्थी सत्याग्रह करने के लिए बम्बई पहुंचे। बम्बई पहंचने पर सत्याग्रह करने से पूर्व छात्र समुदाय कुलपति के दर्शन करने जेल की ओर रवाना हुआ। वह जेल के फ़ाटक पर पहुंचा, तब उसने विस्मय से देखा कि महामना मालवीयजी फाटक की ओर जेलर के साथ बढ़े चले आ रहे हैं। छात्रों ने 'मालवीय जी की जय' के नारे लगाए। मालवीयजी छात्रों को आशीर्वाद देते हुए जेल से बाहर आए। बात यह हुई कि महामना पर 500 रुपया जुर्माना हुआ था। जुर्माना न देने पर जेल में रहना था। परन्तु किसी अज्ञात भक्त ने जुर्माना भर दिया और मालवीयजी को सरकार ने जेल से रिहा कर दिया।

कार्यसमिति के सदस्यों की गिरफ्तारी

कांग्रेस कार्यसमिति भी गैर कानूनी घोषित की जा चुकी थी। अत: उसकी बठक में भाग लेना भी गैर कानूनी था। सरदार पटेल ने जेल जाते हुए जो नई कांग्रेस कार्यसमिति चुनी थी, उसमें महामना मालवीयजी को भी एक सदस्य चुना था। डा० अन्सारी इसके अध्यक्ष और कांग्रेस के डिक्टेटर थे। कांग्रेस कार्य समिति की एक बैठक डा० अन्सारी ने अपनी कोठी में बुलाई। पहले से तैयार प्रस्ताव कांग्रेस कार्यसमिति ने स्वीकार किए। इसी समय पुलिस आई और कांग्रेस कार्यसमिति के सभी सदस्य गिरफ्तार कर लिए गए। दिल्ली की जेल में रहने के बाद महामना को नैनी जेल भेज दिया गया। परन्तु मालवीयजी के अस्वस्थ होने के कारण समय से पहले ही वे जेल से छोड़ दिए गए। इस समय महामना मालवीयजी की आयु 70 साल की थी। जेल के नियमों के अन्तर्गत उनको जेल में नहीं रखा जा सकता था।

मालवीयजी 1886 से 1936 तक (फैजपुर की कांग्रेस तक) कांग्रेस के अधिवेशनों में सम्मिलित होते रहे। जयपुर कांग्रेस के समय मालवीयजी 76 साल के थे। यह उनकी कांग्रेस के प्रति भक्ति को प्रकट करता है। उनका जीवन देश सेवा के लिए समर्पित था। प्रसिद्ध पत्रकार श्री चिंतामणि ने मालवीयजी को गांधी जी के समकक्ष एकमात्र नेता कहा था।

●

पारिवारिक जीवन

महामना मालवीयजी का पारिवारिक जीवन आदर्श था। माता-पिता के प्रति मालवीयजी की भक्ति की कोई सीमा नहीं थी। उनके निवासस्थान में केवल दो चित्र टंगे रहते थे। एक उनके पिता का और दूसरा उनकी माता का। इनके फोटो वह सफर में भी सदा साथ रखते थे। और पूजा-पाठ के समय इनके भी दर्शन करते थे और इनको नमस्कार करते थे। मालवीयजी अपने यशस्वी जीवन की सफलता का रहस्य देश-भक्ति और मातृ-पितृ भक्ति बताया करते थे। जब मालवीयजी वकालत करते थे उन दिनों की बात है : मां से कहा—मां, अब ईश्वर भजन करो, घर की चिन्ता करना छोड़ दो। मां ने कहा—बेटा, मेरी सन्दूकें तो अभी तक खाली हैं। पुत्र ने जवाब दिया, वह भर जाएंगी, चिन्ता न करें। सन्दूकें जब भर जातीं तो मां बहुओं, बेटियों और पौत्रियों को इकट्ठा करतीं और वह सब बांट देतीं और सन्दूके फिर खाली हो जातीं।

मां की मृत्यु के समय मां का सबसे लाडला बेटा बार-बार याद करने पर भी नहीं पहुंच सका। इसका मालवीयजा को सदा दुःख रहा। इसको वह कभी नहीं भूलें। लार्ड मिण्टो की यादगार में महामना ने इलाहाबाद में एक पार्क बनवाया था. इसका उद्घाटन वाइसराय लार्ड मिण्टो ने स्वयं किया। जिस दिन उद्घाटन हुआ, उस समय महामना इस समारोह में व्यस्त थे। मां ने बेटे को इस सभा में तीन बार आदमी बुलाने भेजे। कड़ी परीक्षा थी। एक ओर जन-सेवा का कार्य था, दूसरी ओर मां की ममता और भक्ति थी। इस धर्म संकट के समय धीरज की मूर्ति महामना समारोह में बने रहे और मां के अन्तिम दर्शन न कर सके। जिस मां की आंखों में आंसू देखकर मालवीयजी ने धर्माचार, धर्मप्रचारक और व्यास होने का संकल्प त्याग दिया था और जिसकी प्रेरणा से वकील और राष्ट्रनेता हुए, उसकी अन्तिम इच्छा प्रिय पुत्र पूरी न कर सका।

वधु-विजय

मालवीयजी की आयु केवल 16 वर्ष की थी कि एक बार मिर्जापुर के ब्राह्मण-पण्डितों की सभा में वह अपने चाचा के साथ सम्मिलित हुए। वहां शास्त्र चर्चा छिड़ी हुई थी। चाचा से अनुमति ले कर, उसने पण्डितों की सभा में संस्कृत में भाषण दिया। पण्डित मण्डली धाराप्रवाह संस्कृत भाषण सुनकर धन्य-धन्य कह उठी। पण्डितों की मण्डली में पं० नन्दलाल शर्मा उपस्थित थे। उन्होंने मालवीयजी का भाषण सुना और इतने अधिक प्रभावित हुए कि उन्होंने अपनी कन्या कुन्दन देवी मदन मोहन को देने का संकल्प कर लिया। मालवीयजी के चाचा ने यह सम्बन्ध स्वीकार कर लिया। इसके दो साल बाद मालवीयजी का सनातन रीति से विवाह हुआ।

महामना अपनी पत्नी को अन्नपूर्णा कहा करते थे। जब वह भोजन के लिए चौके में जाते, तो बड़े मधुर स्वर में कहते—अन्नपूर्णा, तुम्हारा पुराना भिखारी आ गया है।

पत्नी आवाज सुनते ही झटपट आती और राष्ट्र के महानतम भिखारी के आगे मुस्कराते हुए थाली परोस कर रख देती।

भोजन करते हुए मालवीयजी कभी, किसी प्रकार की शिकायत नहीं करते थे। एक बार बच्चों ने अनजाने उनकी सब्जी में नमक डाल दिया। परन्तु वह तोरई की सब्जी खा गए। तोरई कैसी बनी है, यह पूछने पर बच्चों को मालवीयजी ने जवाब दिया कि कड़वी है। बच्चों ने समझा कि बाबा कह रहे हैं, नमक नहीं है। बस फिर क्या था, प्रत्येक बच्चा एक-एक चुटकी नमक उनकी सब्जी में डालता गया। मालवीयजी चुपचाप भोजन करते रहे।

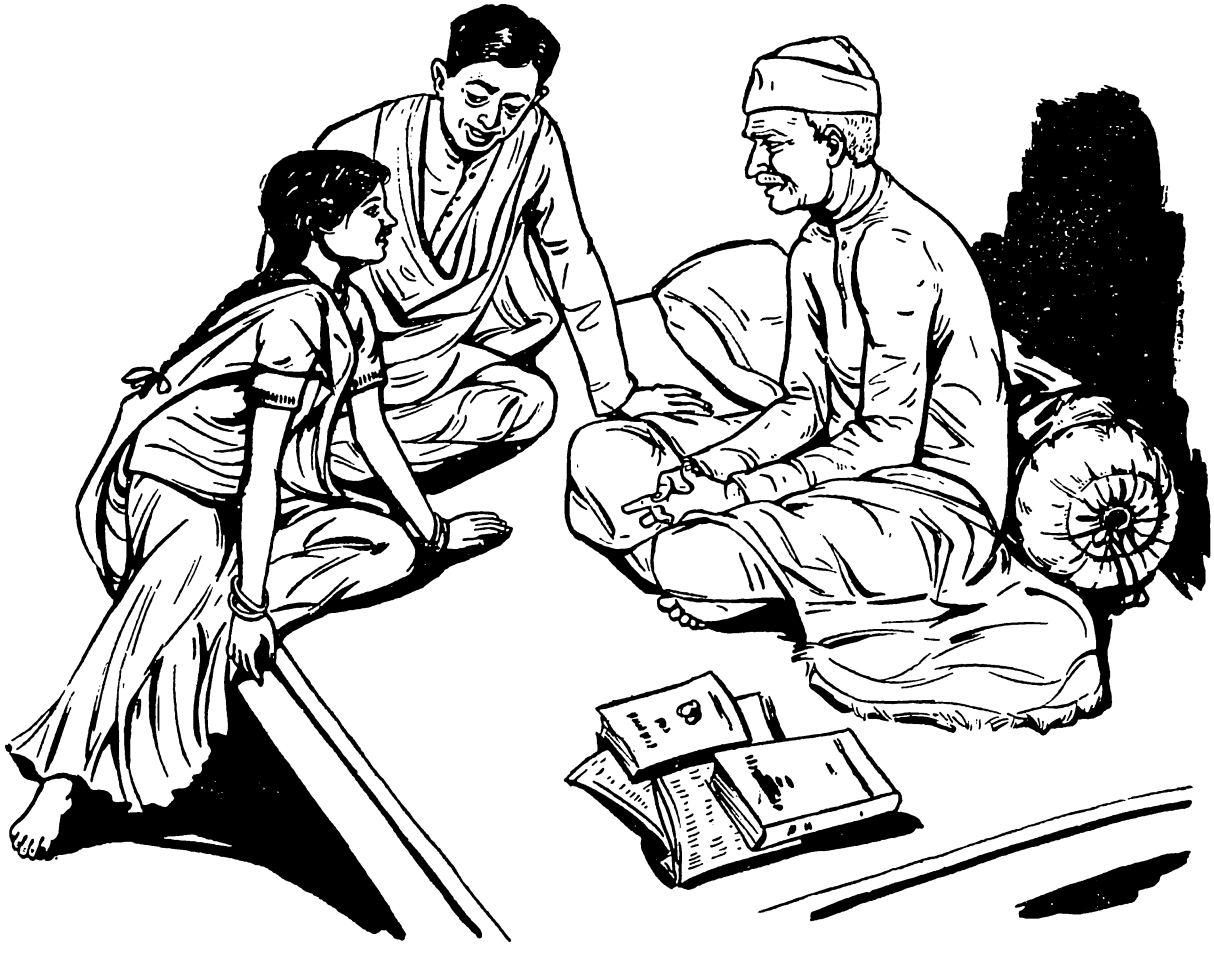

अपनी पौत्री के साथ मालवीयजी

एक दिन मालवीयजी बहुत चिन्तित और गमगीन मालूम होते थे। उनकी एक पोती ने उनको हँसाने की बहुत कोशिश की, पर वह विफल रही। इस समय मालवीयजी के हाथ कांपने लगे थे। पोती ने पूछा, बाबा क्या आपने अपनी भांजियों को कभी पीटा है ? क्योंकि दादी कहती हैं कि जो पुरुष अपनी भांजियों को मारता है, उसके हाथ बुढ़ापे में कांपने लगते हैं। पोती की इस बात को सुनकर महामना गद्‌गद हो गए और उसको दुलार करते हुए कहने लगे, तू बड़ी शरारती है, मुझे हँसाने के लिए तूने यह बात गढ़ी है।

भारत के इस सर्वश्रेष्ठ सात्विक ब्राह्मण का भोजन भी सर्वथा सात्विक था। उसमें गाय का दूध, मक्खन और घी की प्रधानता थी। मालवीयजी आलू नहीं खाते थे। काशी में एक बार पं० भीमसेन शर्मा ने व्याख्यान देते हुए कहा था कि आलू नहीं खाना चाहिए क्योंकि वह मैला से पैदा होता है। मालवीयजी भी उस सभा में उपस्थित थे। उस दिन से उन्होंने आलू खाना छोड़ दिया। किन्तु उनके पिताजी को आलू बहुत प्रिय थे। अतः पिता के श्राद्ध के दिन वे आलू खाते थे।

मालवीयजी के चार पुत्र—रमाकान्त, राधाकान्त, मुकुन्द और गोविन्द हुए। दो पुत्रियां भी हुईं।

एक बार मालवीयजी के पोते पद्मकान्त मालवीय बीमार पड़े। उनकी बीमारी की सूचना महामना को नहीं दी गई। निराश होकर, परिवार के लोगों ने 'उनको चारपाई से नीचे उतार दिया। ठीक इसी समय घर के दरवाजे पर मोटर का भोंपू बजा। घर भर ने समझ लिया कि महामना आ गए थे। आते ही मालवीयजी ने कहा, बच्चे को नीचे क्यों उतार दिया? यह तो जीवित है। इसको ऊपर बिस्तर पर लिटाओ। मैं अभी वैद्यजी को बुलाकर लाता हूं। वह वैद्य पांडेजी के पास पहुंचे और उनको साथ लेकर आए। दवा दी गई। बच्चे ने आंखें खोल दीं। पद्मकान्त मालवीय आज भी जीवित हैं और वह मानते हैं कि यह उनके बाबा के पुण्य का फल है।

परिवार ही नहीं, उनके मित्र तक विश्वास करते थे कि मालवीयजी के दर्शन से संकट दूर हो जाता है।

महामना जितने विराट् थे, उतना ही बड़ा उनका परिवार था। उनके परिवार की सीमा बांधना सम्भव नहीं।

मालवीयजी की मानवता

महामना सरलता और शान्ति की साकार प्रतिमा थे। उन्हें कभी क्रोध नहीं आता था। वह समझौता-प्रिय व्यक्ति थे। वह विवादों को इस ढंग से शान्त करते कि दोनों पक्ष सन्तुष्ट हो जाएं।

उनके परम मित्र राजा रामपाल सिंह की जागीर 'कोर्ट आफ वार्ड्स' के आधीन थी। उनके पोते एक अंग्रेज के संरक्षण में रखे जाते थे। यह अंग्रेज फ़ौज से सेवा-निवृत्त एक अफसर था। वह पेंशन पाने के साथ-साथ इन राजकुमारों का अभिभावक होने के नाते अतिरिक्त वेतन पाता था। उसको भारत के राजनीतिक नेताओं के प्रति भारी क्रोध था। ब्रिटिश प्रभुता में किसी प्रकार की कमी हो, यह उसको पसन्द न था। राजा रामपाल सिंह के तीनों पोते लखनऊ में उस अंग्रेज की निगरानी में रहते थे। वह उनको किसी नेता से नहीं मिलने देता था। इन लड़कों ने मालवीयजी के साथ अपना सम्बन्ध स्थापित कर लिया था। मालवीयजी ने अंग्रेज का स्वभाव और विचार जानकर भी इन तीनों लड़कों के साथ मेल-जोल बढ़ाया। लडकों को अंग्रेज के कोप से बचाने के लिए मालवीयजी खुद ही उनके निवास-स्थान पर पहुंच जाते और दो-एक घंटे उनके साथ रहते। उन पर दादा के समान स्नेह की वर्षा करते थे। लड़के अपना हृदय खोलकर मालवीयजी के सामने रख देते थे।

गर्मियों में ये लड़के नैनीताल में रहते थे और वह अंग्रेज भी उनके साथ ही रहता था। इनमें से मंझला अधिकतर अंग्रेज की बात नहीं सुनता था। वह नैनीताल में घूमने के समय एक मोटा डण्डा लेकर चलता था। अंग्रेज को यह बिलकुल न भाता था। अंग्रेज ने बहुत बार मना किया। पर मंझला अपनी बात पर अड़ा रहा। राजपूती आन-बान का प्रश्न था। वह राज-हठ थी। अंग्रेज इससे बहुत चिढ़ता था। मालवीयजी गर्मियों में हर साल नैनीताल जाया करते थे। जब वह नैनीताल में इन लड़कों से मिलने गए, तो इनके अभिभावक अंग्रेज ने महामना से मंझले की शिकायत कर दी।

लड़कों का कौतूहल बढ़ा और उनको इसका ज्ञान हो गया कि अंग्रेज ने मंझले भाई की शिकायत महामना से की है। किन्तु मालवीयजी ने यह बात लड़कों पर प्रकट नहीं की। लड़कों और मालवीयजी तथा मालवीयजी और अंग्रेज की भेंट बराबर होती रही। नैनीताल से महामना के विदा होने का दिन आया ये लड़के भी उनको विदा करने गए। महामना जब दांडी पर बैठ गए तो ये तीनों भाई मालवीयजी का चरण-स्पर्श करने के लिए आगे बढ़े। जब मंझले ने महामना के पांव छूकर और पांवों पर सिर रखकर महामना को विदाई दी तो महामना ने उसके सिर पर प्यार से हाथ फेरते हुए देखा कि वह डण्डा साथ लाया है। यह वही डण्डा था, जिससे अंग्रेज चिढ़ता था। मालवीयजी ने प्यार से उस लड़के से कहा, जरा अपना डण्डा तो दिखाओ। मालवीयजी ने डण्डा अपने हाथ में लिया। उसको देखकर मुस्कराते हुए कहा, यह तो बहुत अच्छा है, यह तो इस बूढ़े के लायक है। तुम इसका क्या करोगे। इसके बदले मेरी यह छड़ी ले लो। डण्डा-छड़ी के अदल-बदल से अंग्रेज भी प्रसन्न हो गया और मंझला लड़का भी प्रसन्न हो गया। उसको मालवीयजी का एक पवित्र स्मृति-चिह्न अनायास मिल गया।

महामना मालवीय जी कितनी शान्त-प्रकृति के महान् व्यक्ति थे, यह इस घटना से स्पष्ट है।

करुणा मूर्ति

राजर्षि टण्डन मालवीयजी को करुणा मूर्ति कहते थे। वस्तुतः मालवीयजी थे भी ऐसे ही। प्रयाग में माघ मेला सदा सर्दियों में होता है। मालवीयजी भोजन करने बैठे ही थे कि उनको खबर मिली कि मेले में आग लग गई है, और यात्रियों के ठहरने के लिए बनाए गए सब छप्पर जल गए हैं।

मालवीयजी भोजन छोड़कर टण्डनजी के घर गए और कहा 'स्वयं सेवक इकट्ठा करो और बाल्टियां और घड़े जमा करो।' जल्दी करो, आग बढ़ती जा रही है।' कुछ मिनट में स्वयंसेवक घड़े और बाल्टियां लेकर आ गए। मालवीयजी ने एक घड़ा उठाया और आगे-आगे चल दिए। जलती आग बुझ गई। पर, आग बुझने से समस्या तो हल नहीं हुई। सभी सर्दी में कहां ठहरें।

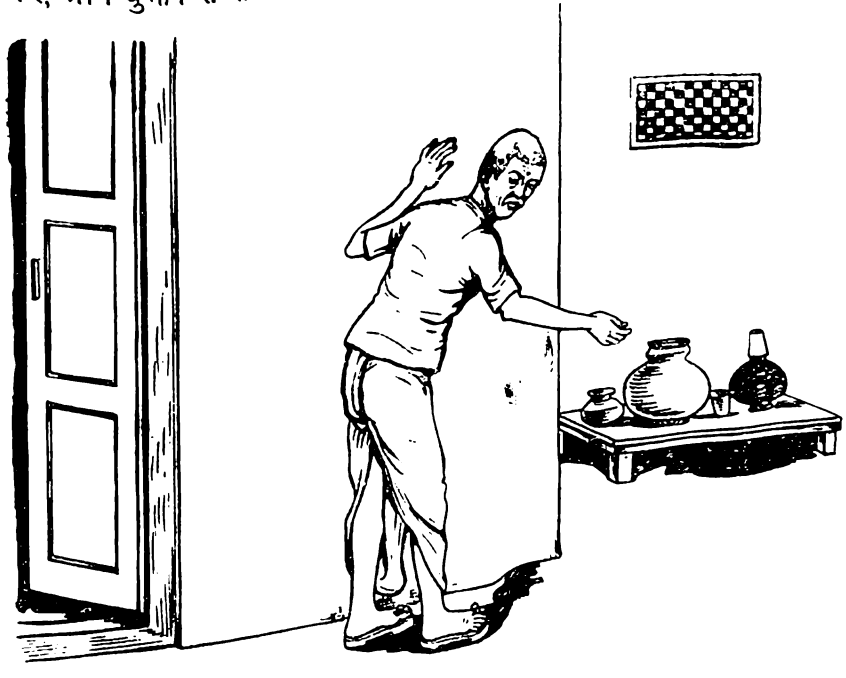

मालवीयजी को अपने नौकर के आराम की भी चिंता थी, इसलिए उसे जगाए बगैर वह स्वयं पानी लेने जा रहे हैं।

पूले मंगाए गए। नौ छप्पर छाए गए। मालवीयजी ने अपने हाथ से छप्पर बांधा। प्रातःकाल माघ मेले का नगर पहले के समान तैयार हो गया। हां, कुछ छोलदारियां अवश्य बढ़ गई थीं।

एक बार माघ मेले के दिनों में मूसलाधार वर्षा हो गई। साधु सर्दी में ठिठुरने लगे। मालवीय जी को समाचार दिया गया। मालवीयजी स्वयं सेवकों को लेकर लकड़ियां ढो-ढो कर साधुओं के पास पहुंचाने लगे, जिससे वह धूनी लगाकर सर्दी दूर कर सकें। साधु-महात्माओं का कष्ट महामना अपने प्राण देकर भी दूर करने को तैयार रहते थे।

जब एक बार मालवीयजी बीमार पड़े तो उनके पुत्र गोबिन्द कान्त मालवीय ने एक सेवक को रात्रि में सेवा शुश्रुषा के लिए उनके द्वार पर सोने को कह दिया। मालवीयजी जब उठे, तो दरवाजे पर सेवक को सोता देखकर, उन्होंने एक-दूसरा लम्बा रास्ता लिया और दूसरे दरवाजे से होकर लघुशंका से निवृत्त होकर लौटे। जब वह गागर को टेढ़ा करके हाथ धोने लगे, तो आवाज सुनकर उनके पुत्र जाग उठे। उन्होंने अपने रोगी वृद्ध पिता को स्वयं अपने हाथ धोते देखा और रो पड़े। वह पास आकर बोले—बाबू, हम लोग क्या काम आएंगे? मालवीयजी ने कहा, 'जाओ आराम करो। दिन भर के थके सेवक को उठाना उचित नहीं। इस कारण से किसी को उठाया नहीं। फिर मेरा कुछ घूमना ही हो गया। दिन भर तो तुम लोगों ने बिस्तर पर लिटाए रखा।' पुत्र क्या कहता? उसकी आंखों में केवल अश्रु थे।

मालवीयजी के बीमार होने की खबर आस-पास के गांवों में भी फैल गई। अब क्या था, भक्त दर्शनार्थी आने लगे। पर चारों दरवाजों पर बाबू शिव प्रसाद का कड़ा पहरा था। उनकी अनुमति बिना लिए कोई महामना के पास नहीं पहुंच सकता था।

महामना ने बाबू शिव प्रसाद गुप्त से कहा कि भाई तुम मेरी व्यथा को देखते हो, पर दूर-दूर गांवों से आए इन ग्रामाण भाइयो की व्यथा की ओर क्यों नहीं देखते। इनको मैं कैसे निराश कर सकता हूं,? न जाने ये लोग कैसी मुसीबत में जीवन बिता रहे हैं? मैं उनसे मिलने से भी इन्कार कर दूँ? बाबू शिव प्रसाद गुप्त इस महात्मा के आगे सिर झुका कर वापस लौट आए। मालवीयजी का दरबार पहले का तरह भरन लगा।

पंजाब माशल-ला का घटनाओं की जांच के लिए महामना ने कांग्रेस की ओर से श्री मोती लाल नेहरू की अध्यक्षता मे एक जांच कमेटी नियुक्त की थी। कष्ट-पीड़ित और उजाड़-परिवारों को सहायता पहुंचाने का कार्य करने के लिए प्रयाग सेवा समिति को अपने साथ पंजाब ले गए थे। यह सब कार्य मुख्यत: तीन नेता कर रहे थे : महामना मालवीयजी, स्वामी श्रद्धानन्द, और मोती लाल नेहरू जो कभी प्रयाग और सेंट्रल कालेज मे एक साथ पढ़ते थे और एक ही अखाड़े में कुश्ती लड़ते थे। पर, थे तीनों भिन्न प्रकृति के। सहायता देने के कार्य का संगठन श्री वैंकटेश नारायण तिवारी कर रहे थे और वही प्रयाग सेवा समिति क पंजाब में संचालक थे। मई महीने की भयानक गर्मी के दिन थे। गुजरांवाला में यह मंडली घूमने निकली। तिवारीजी साथ थे, पर उनके पास छाता नहीं था। यह देखकर मोतीलाल नेहरू ने कहा, तिवारीजी क्या खुदकशी करने पर उतरे हो? स्वामी श्रद्धानन्द ने कहा, अरे भाई सवा रुपये का छाता क्यों नहीं खरीद लेते? महामना दाहिने हाथ पर किनारे-किनारे चल रहे थे। धीरे-धीरे सरकते हुए तिवारीजी के पास पहुंचे और उनको अपने छाते में ले लिया। तिवारीजी यह देखकर कि मालवीयजी उन पर छाता कर रहे हैं, भारी संकोच में पड़ गए। उनका संकोच दूर करते हुए मालवीयजी ने कहा, कि मैं सेवा समिति का अध्यक्ष हूं। क्या मैं इनकी सेवा करने का भी अधिकारी नहीं हूं? प्रयाग सेवा समिति का संचालक क्या उत्तर देता?

वचन और समय का पालन

गांधीजी व मालवीयजी सदा वचन का पालन करते थे। 1934 में महामना मालवीयजी ने गुरुकुल कांगड़ी में आने का वचन दिया था। वह हरिद्वार आए भी, किन्तु गुरुकुल कांगड़ी नहीं जा

सके क्योंकि गंगा की धारा अविच्छिन्न रखने के प्रश्न पर हरिद्वार में बातचीत चलती रही, और सब नेता लार्ड हार्डिंग के साथ दिल्ली लौट गए थे। लेकिन महामना को सदा इसका ख्याल बना रहा। 1919 में जब इम्पीरियल कौंसिल में 'इंडेमिनिटी बिल' पेश था, तब बीच में एक दिन की छुट्टी आ गई थी। बस महामना किसी को सूचना दिए बगैर हरिद्वार रवाना हो गए और स्टेशन से पैदल चलकर कनखल के दक्ष के मन्दिर पर पहुंचे। वहां से गंगा की धारा पर बने नावों के चार पुलों को पार किया, रेत और छप्परों पर चलते हुए, वन को पार कर (मालवीयजी रास्ता भटक गए थे) गुरुकुल कांगड़ी पहुंचे और वह भी दो घंटे के लिए। क्योंकि अगले दिन उनको इंडेमिनिटी बिल पर ऐतिहासिक भाषण देना था, जो आज भी इतिहास की अविस्मरणीय घटना बनी हुई है।

जनता यह मानती थी कि मालवीयजी हर जगह लेट पहुंचते हैं। किन्तु, मालवीयजी कहते थे कि वह कभी लेट नहीं होते।

दिल्ली में एक विशाल सभा का आयोजन किया गया था। सभा के संयोजक प्रो० इन्द्र पर भार था कि वह सायंकाल की गाड़ी में मालवीयजी को अवश्य बिठा दें। सभा के संयोजकों ने इसकी गारण्टी दी थीं कि मालवीयजी की गाड़ी नहीं छूटने पाएगी।

मालवीयजी का जोशीला धारा-प्रवाह भाषण बढ़ता ही जा रहा था। जनता का उत्साह और जोश वक्ता को विदा देने से रोक रहा था। पर घड़ी की सुई कह रही थी कि अब विदाई ली जाय। विराम चिन्ह लगाना घड़ी के वश में नहीं था। अतः सभा के संयोजकों ने पहले मालवीयजी के सामान और उनके साथियों को स्टेशन पहुंचाया। सभा-स्थल से स्टेशन थोड़ी ही दूर पर था। यह लोग गाड़ी के स्टेशन पर आने की सूचना बड़ी आसानी से दे सकते थे।

गाड़ी का समय हो गया है, यह मालवीयजी को कैसे बताया जाय ? घडी देखने से वह इन्कार करते हैं। हाथ तक पहुंचाई पर्चियां हवा से गिर जाती हैं। मालवीयजी जानते हैं कि यह उनको सूचना देने के लिए कर रहे हैं। भाषण समाप्त करने के लिए नहीं। महामना जब इच्छानुसार बोल चुके, तो सभा-स्थल के पास खडी कार पर बैठे। उनके साथ प्रो० इन्द्र भी गए।

रास्ते में महामना ने कहा, इन्द्र, तम जल्दी घबडा जाते हो। तुम शायद यह नहीं जानते कि मालवीय कभी लेट नहीं होते, गाडी सदा लेट होती है। स्टेशन पहुंचने पर मालूम हुआ कि गाड़ी दो घंटा लेट है। सुनकर तत्काल महामना ने अपने चारों ओर खड़े लोगों से कहा, देखा, मैंने कहा था कि यदि मालवीय लेट होता है तो गाड़ी भी तो लेट होती है।

मालवीयजी का कहना सत्य था कि गाड़ी छूट जाने से कभी ऐसा नहीं हुआ कि वह ठीक समय पर पहुंचने की जगह न पहुंचे हों। रेल पकडने के लिए कई बार महामना रेल कर्मचारियों की भी सहायता ले लेते थे। इसी प्रकार एक बार वाइसराय की स्पेशल ट्रेन उन्होंने रुकवाई थी। मालवीयजी एक छोटे स्टेशन पर फंस गए। लेकिन उनको इलाहाबाद सायंकाल ही पहुंचना था। सभा में भाषण भी देना था। वहां से कोई गाड़ी अगले दिन से पहले नहीं जाती थी। वह स्टेशन मास्टर से मिले। पता लगा कि वायसराय की स्पेशल आने वाली है, पर वह यहां रुकती नहीं। मालवीयजी ने कहा, यदि रास्ता साफ है, यह न दिखाया गया तब तो रुकेगी ? स्टेशन मास्टर ने कहा, तब तो रुकेगी। परन्तु इससे सबकी नौकरी जाने का भय है। मालवीयजी ने आश्वासन देते हए कहा, कोई फिक्र न करो, मैं देख लूंगा। गाड़ी रोकने का उपाय करो। स्टेशन पर स्पेशल आई और रुक गई। वाइसराय ने इस छोटे से स्टेशन पर गाड़ी रुकने का कारण जानने के लिए अपने डब्बे से बाहर सिर निकाला, तब उनकी नजर प्लेट फार्म पर टहलते मालवीयजी पर पड़ी। वाइसराय ने महामना को बुलाया और उन्होंने गाड़ी रुकने का यथार्थ कारण बताकर रेल कर्मचारियों की भी रक्षा की।

रौलट बिल पर इम्पीरियल कौंसिल में गरमा-गरम बहस छिड़ी हुई थी, महामना इस संग्राम के एक महान् योद्धा थे। किन्तु दिल्ली पहुंचना बहुत कठिन था। प्रयाग की गाड़ी छूटी तो वह लखनऊ आए। पर, यह गाड़ी भी छूट गई। अब क्या किया जाये। पूछ-ताछ करने पर ज्ञात हुआ कि इम्पीरियल कौंसिल का सभापतित्व करने के लिए लार्ड चेम्सफोर्ड भी दिल्ली जा रहे हैं और उनकी स्पेशल ट्रेन आने वाली ही है। बस. महामना निश्चिन्त होकर स्टेशन के प्लेटफार्म पर घूमने लगे। गाड़ी आई और स्टेशन पर ठहरी। वाइसराय ने देखा कि महामना मालवीयजी बाहर खड़े हैं। पूछा, आप यहां कैसे ? मालवीयजी ने कहा, कि दिल्ली जाना था, पर गाड़ी छूट गई। लार्ड चेम्पफोर्ड ने कहा, तो क्या हुआ, यह गाड़ी तो है, दोनों एक ही साथ दिल्ली पहुंचेंगी। मालवीयजी बैठ गए और रौलेट बिल पर धुंआधार भाषण करने के लिए ठीक समय पर दिल्ली पहुंच गए।

मालवीयजी को यह विश्वास था, कि उनकी गाड़ी कभी नहीं छूट सकती, क्योंकि भारत में रेल गाडियां कभी ठीक समय पर नहीं पहुंचती थीं। अत: अपनी मित्र मण्डली और सहयोगियों की बात न मान कर रास्ते के सब कार्यक्रमों को पूरा करके स्टेशन पर पहुंचते थे और उनको गाड़ी मिल जाती थी।

एक बार वह गोरखपुर अपनी मण्डली के साथ जा रहे थे। सबको मुगलसराय जाकर गाड़ी पकड़नी थी। मालवीयजी के प्रोग्राम में रास्ते में एक रिश्तेदार से मिलना और वहां भोजन करना भी सम्मिलित था। उनका आग्रह वे न टाल सके। मालवीयजी की मण्डली में वकील मुंशी ईश्वरी शरण थे। 1934 से पहले तक बराबर मालवीयजी के साथ रहे थे। उन्होंने हिसाब लगाकर कहा, मालवीय जी, इतने समय में मोटर मुगलसराय नहीं पहुंच सकेगी। साथी के गणित को सुनकर मालवीय जी ने कहा, अरे भाई हमारा भी भगवान है, और वह यह गणित नहीं मानता। भगवान का भरोसा करके निश्चित कार्यक्रम पूरा करो। भगवान के आगे किसकी चलती है ? मालवीयजी रिश्तेदार के घर गए। भोजन किया। पार्टी स्टेशन पर पहुंची। वह विस्मित रह गई, जब उसने सुना कि गाड़ी आध घंटा और लेट है।

मालवीयजी की सहिष्णुता

काशी में एक बार भयंकर दंगा हो गया। हिन्दुओं को भारी नुकसान पहुंचा। महामना की अध्यक्षता में पीड़ित लोगों की सहायता समिति बिठाई गई। जो लोग घिरे हुए थे और कई दिन से निराहार थे, उनके भोजन की व्यवस्था की गई। इसी समय महामना को समाचार मिला कि कुछ मुस्लिम मुहल्लों में भी कुछ लोग कई दिन से भूखे हैं। मालवीयजी ने सुनते ही एक कार की व्यवस्था की और उसमें भोजन सामग्री लाद कर मुस्लिम मुहल्लों में भेजा। दुर्भाग्य से उस पर पथराव हुआ। मोटर के मालिक बंगाली महाशय ही उसको चला रहे थे। शीशा लग जाने से वह जख्मी हो गए थे। मोटर कार लौट गई। परन्तु मालवीयजी इससे विचलित नहीं हुए। उन्होंने बंगाली महाशय की पट्टी की और दुबारा उनको भेजा। इस समय तक मुसलमान समझ गए थे कि महामना मालवीयजी ने भूखों के लिए रोटी भेजी है। गांधीजी ने जब मालवीयजी के इस सत्साहस और उदारता की कथा को सुना तो वह चकित रह गए।

कलकत्ते की ही एक घटना है। मालवीयजी मोटर में जा रहे थे। मुसलमानी मुहल्ला था। एक लड़का मालवीयजी की मोटर के नीचे आ गया। मालवीयजी के साथ चल रहे लोगों ने चाहा कि ड्राइवर मोटर को तेज कर निकाल ले। किन्तु महामना ने ऐसा करने से रोक दिया। मोटर रोकने को कहा। महामना उतरे, और मुसलमानों की जमा भीड़ में से रास्ता निकालते हुए वहां पहुंचे, जहां बालक मोटर के नीचे आ गया था। उसको उन्होंने अपने हाथों में उठा लिया। भीड़ और उनके साथी

मालवीयजी के इस साहस को देखकर चकित रह गए। मालवीय जी ने उस बालक को अस्पताल पहुंचाया। उसको खास चोट नहीं आई थी। वह दो-तीन दिन बाद घर चला गया। जब तक घर नहीं गया, तब तक मालवीयजी उसका हालचाल बराबर पूछने जाते रहे। इस दुर्घटना के दिन महामना ने विशेष रूप से और देर तक पूजा की थी।

मालवीयजी ने एक छोटे रेलवे स्टेशन पर वायसराय की गाड़ी रोक दी

मालवीयजी कहते थे कि भारतवर्ष हिन्दुओं का ही देश नहीं है। मुसलमानों के लिए भी वह प्यारा जन्म स्थान है। यह दोनों धर्मावलम्बी अब यहीं रहेंगे। अतः हिन्दू-मुस्लिम एकता में ही शक्ति निहित है।

संगीतज्ञ मालवीयजी

मालवीय कुल संगीत-प्रेम के लिए प्रसिद्ध था। महामनाजी को भी संगीत-प्रेम विरासत में मिला था। जैसे कथा वांचने का गुण उनके वंश परम्परा से प्राप्त हुआ था, उसी प्रकार संज्ञीत-ज्ञान में भी महामना की स्मृति और मेधा शक्ति बहुत तीव्र थी। राह चलते वह जिस किसी मधुर गीत को सुन लेते थे, वह उनको याद हो जाता था। गीत ही याद नहीं हो जाता था, बल्कि उसका स्वर ताल, लय भी वह पकड़ लेते थे और बड़े-बड़े संगीत शास्त्रियों को गीत शुद्ध रूप में गाकर चकित कर देते थे।

संगीत महामना के लिए मनोरंजन का ही विषय नहीं था। यह उनकी दिव्य औषधि थी, संगीत सुनकर वह अपनी मानसिक थकान दूर करते थे। एक बार संज्ञीत के एक उस्ताद गाना सुना रहे थे। मालवीयजी अस्वस्थ थे। डाक्टर और प्रिंसिपल ध्रुव भी मौजूद थे। संगीतज्ञ महाशय सोहनी राग में कोई गीत गा रहे थे। मालवीयजी स्वभाव से गलत संगीत सुनना पसन्द नहीं करते थे। मालवीयजी उठ बैठे। मालवीयजी ने आसन लगाया। यह देखकर डाक्टर घबड़ाया। वह डरा कि महाराज का ज्वर बढ़ जाएगा। मालवीयजी ने उसकी घबराहट की परवाह न कर सोहनी राग में वह गीत स्वयं स्वर में गाकर सुनाना प्रारम्भ कर दिया। सारी मण्डली चकित रह गई। गीत की गूंज समाप्त होने के बाद चिन्तित डाक्टर से महाराज ने कहा, आप मेरे रोग की दवा नहीं जानते। देखिए मेरी नब्ज, अब ज्वर न होगा। सचमुच ज्वर उतर गया था। डाक्टर विस्मित रह गया। वृद्ध कुलपति रात 10 बजे शुद्ध रूप में राग-रागिनियों का अभ्यास कर सकते हैं, यह इससे पहले कोई नहीं जानता था।

एक बार महामना ने ग्राम-गीतों के संकलन कर्ता श्री रामनरेश त्रिपाठी को भी चकित कर दिया। महामना को ग्राम-गीत या लोक गीत सुनने का बहुत शौक था। त्रिपाठीजी को तार देकर इसके वास्ते बुलाया गया था। उन्होंने अनेक ग्राम-गीत सुनाए। पर महामना को तृप्ति नहीं हुई। उन्होंने 'नदियां धीरे-बहो—' गीत सुनाने के लिए कहा। त्रिपाठीजी ने अपनी शक्ति और अपने सामान्य ज्ञान के साथ गीत गाना प्रारम्भ किया, पर गीत जमा नहीं। वह ठीक-ठीक गा नहीं पा रहे थे। 80 साल के वृद्ध तपस्वी ब्राह्मण को यह रुचा नहीं। निशीथ की बेला में सोने से पहले गीत ठीक स्वर में न गाया जाए, यह उनको सहन नहीं हुआ। वृद्ध, क्षीणकाय भारत का ज्ञानी और संगीतज्ञ ब्राह्मण उठ बैठा। उसने वह गीत गाना प्रारम्भ किया।

●

महाप्रयाण

काया कल्प के बाद से निरन्तर क्षीण बल, दुर्बल और कृश-काय हो रहे महामना अपनी जीवन यात्रा के अन्तिम चरण में शान्ति के साथ गए। गौ-रक्षक, गौ-भक्त मालवीयजी की जीवन-यात्रा की समाप्ति गौशाला की स्थापना के समारोह को आशीर्वाद देने के साथ हुई। 16 साल की आयु में तरुण मदन मोहन मालवीय ने अपने सार्वजनिक जीवन का प्रारम्भ गौरक्षा पर भाषण देने के साथ किया था। अतः उस महान् पुरुष की जीवन-यात्रा की समाप्ति भी गौरक्षा के कार्य के साथ होना उचित ही था।

डाक्टरों और भक्तों के परामर्श और अनुरोध को न मानकर गौशाला के समारोह में सम्मिलित हुए। वहां से लौटते हुए मालवीयजी को सर्दी लग गई। इससे हुआ ज्वर डबल निमोनिया में बदल गया। रोग का यह नया आक्रमण प्राणान्तक सिद्ध हुआ। दुर्बल शरीर 86 साल की आयु में इसको सहन न कर सका। सांस टूटने से चार दिन पहले से मालवीयजी वेहोशी अवस्था में थे।

उमड़ता जन-सागर

महामना के बेहोश रहने का समाचार वाराणसी और भारत-भर में फैल गया और उनके अन्तिम दर्शन करने के लिए लोग बड़ी संख्या में आने लगे। 11 नवम्बर, 1946 को अपार भीड़ श्रद्धांजलि अर्पित करने आई हुई थी। कतार में लोग खड़े थे। एक-एक करके लोग मालवीयजी के कमरे में जाते और उनको नमस्कार करके दूसरे दरवाजे से बाहर हो जाते। यह क्रम 24 घंटे चलता रहा।

अन्तिम दर्शन

12 नवम्बर को मालवीयजी बिस्तर पर लेटे हुए मालूम होते थ कि नींद में है। यह नींद चिरनिद्रा में परिणत होने वाली थी। मालवीयजी का मुख-मण्डल तो तेजपूर्ण था। वह सफेद चादर ओढ़े हुए थे। विशाल माथे पर चन्दन का लेप किया हुआ था। चेहरे पर विकृति का कोई चिन्ह नहीं था। साधारण जनों को यह अनुभव ही नहीं हुआ कि महामना ने जीवन-यात्रा समाप्त कर ली है। डाक्टर यदि यह घोषणा न करते, तो दर्शनार्थी यही समझते कि अनन्य संग्रामों का विजेता और महान् योद्धा थक कर विश्रान्ति ले रहा है।

काशी के मणिकणिका घाट पर चरण पादुका पर मालवीयजी का अन्तिम संस्कार वेद-मंत्रों के साथ किया गया। "भस्माऽन्तं शरीरम्" की उच्च ध्वनि के साथ महामना मालवीयजी का पार्थिव शरीर खाक हो गया और यश शेष रह गया।

पहला स्मरण

महामना मालवीयजी के निधन के कुछ दिनों बाद ही काशी में राजघाट पर रेलवे पुल का

पुनर्निर्माण हुआ। यह पुल भारत के एक श्रेष्ठ प्रशासक श्री रफी अहमद किदवई के प्रयत्न से बनकर तैय - हुआ था। श्री किदवई के सुझाव पर इस पुल का नाम मालवीयजी पुल रखा गया। काशी प्रवेश कर.. ही यह पुल मालवीयजी की याद दिलाता है। इस पुल से गंगातट पर बसी काशी नगरी की झांकी मिलती है, और एक छोर पर मालवीयजी द्वारा स्थापित विख्यात हिन्दू विश्वविद्यालय के शिखर भी वृक्षों के ऊपर झांकते दिखाई देते हैं।

●

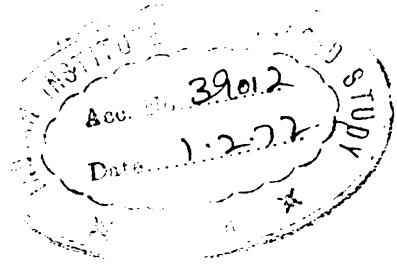

I.I.A.S. LIBRARY

Acc. No.

This book was issued from the library on the date last stamped. It is due back within one month of its date of issue, if not recalled earlier.

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

Library IIAS, Shimla
H 923.754 M 299 A

39012